सोचने और विचार करने से बचने के लिए विश्वास कर लेना एक अच्छा बहाना है - रिचर्ड डिकन्स

क़लम

क़लमकार हो
क्यों कुंद करते हो
क़लम की धार
क़लम के तीखे पैने दंश
दागते रहे हैं रेख में मेख
क़लम चला सकते हो
पर चलाते नहीं हो
यानी ज़िन्दा तो हो
पर ज़िन्दा नहीं हो?
क़लम की नोक पर तुम्हारी
ढेरों राहें सिर्फ
तुम्हारे हुक्म की इंतजार में हैं
धरती का स्पर्श पाते
फैल जाएँगी
हर दिशा में हर ओर।
तुम बस
क़लम की नोक का
मुँह मत बंद करो
खुदकशी को
खुशख़ती में बदल डालो
बड़ी हसरत से ये राहें
राह तक रही हैं
तुम्हारे क़लम दंशों की।

नये साल में नया ?

न जाने कितने साल
यूँ ही गंवा दिये हमने
हर साल
नये साल में कुछ
'नया' ढूँढ़ने में।
साल दर साल बीतते गए
पर 'नया' कुछ भी न मिला
किसी भी नये साल में।
और फिर दरवाजे पर है
एक और नया साल
देखो...
शायद वो 'नया' हो
इसी साल में।
कुछ न कुछ तो फर्क होगा
जाने वाले में
और आने वाले में।
नहीं है?
तो आता ही क्यों है।
चलो फिर ढूंढे
कुछ नया
नये साल में।

- अनिल खयाल

तर्कशील पथ पत्रिका हेतु शुल्क पंजाब नैशनल बैंक में
तर्कशील सोसायटी पंजाब (रजि) के नाम से
खाता सं. 0044000100282234
IFSC: PUNB0004400
में जमा करा सकते है।

मनुष्य समय को अपनी इच्छा अनुसार ढाल सकता है और अपनी मेहनत के बल पर दुनियां बदल सकता है।

मुख्य संपादक
बलबीर लौंगोवाल
balbirlongowal1966@gmail.com
98153 17028

संपादक
प्रा बलवंत सिंह
tarksheeleditor@gmail.com
94163 24802

विदेशी प्रतिनिद्धि
अवतार गिल, कनेडा
अछर सिंह खरलवीर, कवैंटरी (इंगलैंड)
(+44 748 635 1185)
मा. भजन सिंह कनेडा
बलदेव रहिपा, टोरांटो

पत्रिका शुल्क :-
वार्षिक : 150/- रू.
विदेश : वार्षिक : 40 यू.एस.डॉलर
रचनाएं, पत्र व्यवहार व शुल्क
भेजने के लिए पता:
मुख्य कार्यालय
तर्कशील भवन, संघेड़ा बाईपास
तर्कशील चौंक, बरनाला-148101
01679-241466, 98769 53561
tarkshiloffice@gmail.com
पत्रिका को पढ़ने के लिए लॉग
ऑन करें:
www.tarksheel.org
Tarksheel Mobile App :
Readwhere.com

प्रा. बलवंत सिंह, प्रकाशक, मुद्रक, स्वामी, संपादक, मकान न. 1062, आदर्श नगर, पिपली, जिला कुरूक्षेत्र-136131 (हरियाणा) द्वारा अप्पू आर्ट प्रैस, शाहकोट से मुद्रित करके तर्कशील सोसायटी पंजाब व हरियाणा के माध्यम से वितरण हेतु जारी किया।

इस अंक में

संपादकीय

भारतीय पूंजीवादी शासन व्यवस्था में अमीरी और गरीबी की खाई अत्यंत विस्फोटक स्थिति तक और भी अधिक चौड़ी होती चली जा रही है। आज साल 2022 की दहलीज को पार करके जब हम 2023 के दरवाजे पर दस्तक दे रहे हैं तो हम इस पर चिंतन किये बगैर नहीं रह सकते। विश्व बैंक ने अपनी 'गरीबी और सांझा समृद्धि-2022' रिपोर्ट में विश्व स्तर पर गरीबी से संबंधित आंकड़े प्रस्तुत किये हैं। इन आंकड़ों के अनुसार 5 करोड़ 60 लाख और भी भारतीय लोग इस वर्ष में गरीबी रेखा के नीचे चले गए हैं। ये आंकड़े भारत की अर्थ व्यवस्था के पतन का भयानक रूप हमारे सामने प्रस्तुत कर रहे हैं। विश्व भर में गरीबी रेखा से नीचे आने वाले लोगों में से 80 प्रतिशत भारत में से ही हैं। विश्व बैंक ने अपनी रिपोर्ट 'भारतीय आर्थिकता निरीक्षण केन्द्र' द्वारा करवाये गये Consumer Pyramids Householdsurvey के आधार पर तैयार की है। वैश्विक भूख सूचकांक में भारत का 116 देशों में से 101वां स्थान है। पूंजीवादी व्यवस्था द्वारा ही खड़ी की गई वैश्विक स्तरीय संस्थाओं के ये आंकड़े भारत सरकार द्वारा विकास के किये जा रहे भारी-भरकम दावों का मुँह चिढ़ा रहे हैं। ऐसी दशा में जब शासन व्यवस्था, लोगों की समस्याओं का हल करना तो कहीं दूर, उन्हें कम करने में भी पूरी तरह से नाकाम हो जाए तो उस के पास अपनी आयु लम्बी करने के लिए केवल एक रास्ता ही रह जाता है - व्यवस्था के विरुद्ध उठने वाले संघर्षों की धार को वर्ग संघर्षों से दूर ले जा कर धर्मों के आधार पर लोगों को भ्रातृघात वाले युद्धों में झोंक-देना। भिन्न-भिन्न संप्रदायों में फैलाई जा रही परस्पर घृणा इसी एजेंडे के अधीन ही वर्तमान दौर में जोरों पर हैं। श. भगत सिंह ने लिखा था: ''लोगों को आपस में लड़ने से रोकने के लिये वर्ग चेतना की जरूरत है। गरीबों, श्रमिकों एवं किसानों को साफ-साफ समझाना चाहिए कि तुम्हारे वास्तविक शत्रु पूंजीपति है, इसलिए तुम्हें इन के हथकण्डों से बच कर रहना चाहिए। संसार के समस्त गरीबों के, चाहे वे किसी भी जाति, नस्ल, धर्म, व कौम के हों, अधिकार एक ही हैं।'' सांप्रदायिकता के जहर से सावधान रहना आज अत्यन्त जरूरी है। गरीबी, बेरोजगारी की मार सभी धर्मों के, किसी भी धर्म को न मानने वालों, श्रमिकों पर एक जैसी ही है। श्रमिक लोगों के हित समान है परन्तु शासन करने वाले धर्मों, जातियों इत्यादि को लोगों में भेदभाव उत्पन्न करके उन पर शासन करने के लिये प्रयोग में लाते हैं। आओ, 2023 के आगमन पर इस समझ को विशाल पैमाने पर लोक चेतना का हिस्सा बनाने का संकल्प करते हुए वर्ग चेतना, तर्क एवं विज्ञान के सूर्य को और अधिक प्रचंड करते हुए प्रत्येक कोने, प्रत्येक दर-दरवाजे, प्रत्येक गली एवं प्रत्येक गांव तक इस रोशनी को लेकर जाएं। इतिहास गवाह है कि ऐसे आर्थिक संकटों के गर्भ में से ही सुर्ख सूर्य का उभार होता है।

प्रेतबाधा बनाम ठग विद्या

– सरल जैन

आज के दौर में रोज ब रोज होने वाली वैज्ञानिक खोजों से जहां लोग अचरज में पड़ जाते हैं, वहीं ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जो पोंगापंथी के चक्कर में पड़ कर अपनी बड़ी बड़ी मुसीबतों का हल भी जादू टोना और झाड़फूंक में खोजते हैं।

बंगाल का जादू, बस्तर का टोना, राजस्थान के भूत भगा लो जैसी जगहें तो दुनिया में ऐसे तरीकों के लिए मशहूर थी हीं, अब नारमौल नामक एक और जगह का नाम उजागर हुआ है।

यहां से 7 किलोमीटर दूर घरस गांव में एक मजार है। 14वीं सदी में बनी इस दरगाह पर सैकड़ों लोग भूतपिशाच से छुटकारा पाने की रोजाना ही कोशिश करते मिल जाएंगे। यहां पर झाड़फूंक के लिए आई महिलाओं की तादाद ही ज्यादा होती है। यहां गरीब तबके के लोग ही ज्यादा आते है।

यह दरगाह अपने चौंकाने वाले कारनामों के लिए मशहूर हो गई है। कुछ लोगों का मानना है कि यहां आने वाले सभी पीड़ितों के शरीर में घुसे शैतान को बाबा सजा देते हैं।

यहां पर 3 तरह से इलाज होता है। पहला, कचहरी/ दूसरा, अदालत और फिर तीसरे में पीड़ित महिला को एक गड्ढे में अपना सिर डालना होता है। सब से कठिन और आखिरी सजा फांसी होती है।

इस सजा के लिए यहां पर फांसी घर भी बनाया गया है। सजा देने से पहले बाबा के दरबार में बाकायदा पेशी होती है। समझा तो यह भी जाता है कि बाबा के दरबार में पहुंचते ही शैतान अपनी गलतियां बताने और कबूल करने लगता है।

बाबा का कहना है कि जिस तरह का शैतान होता है, उसे उसी तरह की सजा दी जाती है। ऐसे नजारे यहां अकसर देखने को मिल जाते हैं। सजा के इंतजाम और नियम देखते ही शैतान खुद ब खुद बोलने लगता है।

बाबा का कहना है कि सजा के समय अगर पीड़ित आदमी को दर्द हुआ, तो समझो कि उस के अंदर शैतान नहीं है। अगर कठोर से कठोर सजा देने और भुगतने के बाद भी पीड़ित को दर्द का एहसास न हो तो समझो कि शैतान या पिशाच ने उसे बुरी तरह जकड़ रखा है।

दरगाह के पास ही एक तालाब है, जिस में नहाने के बाद ही किसी को बाबा के दरबार में घुसने दिया जाता है। महिलाओं को दरगाह के अंदर जाने की पाबंदी है। झाड़फूंक के लिए बाबा ने गुरुवार को खास दिन तय कर रखा है। बाबा के दरबार में रोजाना 3 बार हाजिरी लगती है।

पीड़ित और उस के साथ आए लोगों को खाने पीने, रहने आदि का इंतजाम खुद ही करना पड़ता है। पीड़ित को बाबा की अदालत में केवल चना और काली मिर्च ही खाने की इजाजत होती है। नमकीन और मीठे पकवान पर पाबंदी होती है। बाबा का कहना है कि शैतान हमेशा अच्छे पकवान पसंद करते हैं, जो वे पीड़ित के जरिए खाते हैं। यही कारण है कि पीड़ितों को चना और काली मिर्च के अलावा और कुछ भी खाने पर पाबंदी है।

बाबा यहां आने वालों से कभी कोई फरमाइश नहीं करते, बल्कि लोग अपनी इच्छा से खुद ही बकरा, मुरगा, सोनाचांदी और दूसरी कीमती वस्तुएं चढ़ा देते हैं।

हैरानी ही नहीं, दुख भी होता है कि आज के दौर में भी ऐसे नज़ारे अकसर देखने को मिल ही जाते हैं।

दिल्ली की एक महिला तांत्रिक से जब मैं मिलने गई, तो मुझे भी वहां लाइन में बैठना पड़ा। मिलने पर महिला तांत्रिक ने मुझ से भी पेशेवर बातें की, मगर 'नहले पर दहला' मारते हुए जब मैं ने कहा कि मैं बंगाल का काला जादू जानती हूं। मैं ने कलकत्ता के कालीघाट में 12 साल तक कुंडली जगाई है, तो वह बुरी तरह झेंप गई। उस ने बाद में उस ने जो बताया

वह काफी दिल दहलाने वाला था।

उस ने बताया कि एक बार उस की जिंदगी में ऐसा समय भी आया था कि वह एकएक पैसे के लिए मुहताज हो गई थी। उस के पास चना खरीदने तक के लिए भी पैसे नहीं थे। तब उस ने किसी महिला को तंत्रमंत्र की कुछ जानकारी दे दी। जानकारी तो उस ने सुने के आधार पर दी थी। मगर दूसरी महिला ने इसे सही मानते हुए उसे तांत्रिक करार दे दिया। धीरे धीरे उस के पास पूछने वालों का तांता लगने लगा।

तब एक दिन बैठे बैठे उस के मन में खयाल आया कि जब तक समाज में अज्ञानी पैदा होते रहेंगे, 'बुद्धिमान' भूखे नहीं मर सकते। बस, फिर क्या था, उस ने खुद को ही महिला तांत्रिक करार दे दिया। आज उस के पास नौकर, बंगला, गाड़ी, सब कुछ है। लोगों को महीनों पहले उस से मिलने का समय लेना पड़ता है।

राजस्थान के 'तिजारा' गांव का, जो अलवर दिल्ली रोड पर है, मैं ने बड़ा नाम सुना था कि वहां प्रेतबाधा दूर होती है। जानने के लिए मैं वहां गई। चंदा प्रभु के आलीशान मंदिर के पिछले हिस्से में देदरा है, जहां लोग प्रेतबाधा दूर कराने के लिए दूर दूर से आते हैं। मैं भी भीड़ में खड़ी थी। अचानक मेरे पास से किसी आदमी के बोलने की आवाज़ आई कि मैं प्रेतबाधा दूर करवा सकता हूं। यह सुन कर मुझे हंसी आ गई।

मैं उसे 3 दिन से अपना पीछा करता देख रही थी। मैं ने कहा, ''मुझे पीर जी सिद्ध हैं।'' इतना कहना था कि वह आदमी कब वहां से चुपचुप खिसक गया, मुझे पता ही नहीं चला। फिर जितने भी दिन मैं वहां रही, मुझे वह दिखाई नहीं दिया।

हकीकत में देखा जाए तो प्रेतबाधा कुछ नहीं होती। यह एक तरह की दिमागी सोच ही होती है, जो किसी न किसी हादसे से पैदा हुए सदमे का नतीजा होती है। मध्य प्रदेश में गंगरैल बांध बन रहा था, आसपास के गांव के लोग वहां मेहनत मजदूरी करने के लिए आते थे। उन्हीं में लगभग 16 साल की शांति नाम की एक मजदूर लड़की भी थी।

एक दिन ठेकेदार की बुरी नजर उस पर पड़ गई और अंधेरे का फायदा उठा कर ठेकेदार ने उस के साथ एक पेड़ के नीचे बलात्कार किया।

शांति पागल हो गई। जैसे ही वह उस पेड़ तक पहुंचती, तड़प कर चीखने चिल्लाने लगती। अपने बदन से सारे कपड़े उतार फेंकती और अपने अंगों को देख कर जोर से हंसने लगती। वह अपने बाल भी खोल देती और हिलने डुलने लगती।

एक दिन जैसे ही काम करते समय उस ने ठेकदार की आवाज सुनी, उस ने बिना सोचे समझे अपने सारे कपड़े उतार कर फेंक दिए। वह चीखने लगी, ''आ गले लग जा वरना मैं तुझे मार डालूंगी।'' अजीब हरकतें देख ठेकेदार तो चुपचाप खिसक लिया, मगर छत्तीसगढ़ी मजदूरों ने प्रेतबाधा समझ कर उस पर घड़ों पानी डाल दिया। मगर थोड़ी देर बाद जब वह शांत हुई, तो हरकत पर शरमाई और पछताई भी।

6 माह बाद गर्भवती होने का पता लगने पर आवाज के 'वश' में हो कर वह ठेकेदार के ठिकाने पर भी पहुंचने लगी थी। लिहाजा ठेकेदार ने अपनी 'इज्जत' बचाने की खातिर उसे उठवा दिया।

महिलाओं, युवतियों और किशोरियों के साथ अकसर ऐसा होता है। वे अपने ही घर में सुरक्षित नहीं होती। उनकी इज्जत पर डाका डालने वाले बहुत से बाहर के भी नहीं, घर के ही लोग होते है। जब वे इसका विरोध करना चाहती हैं तो बदचलन करार दी जाती है।

जो ऐसे हादसों को भूल जाती हैं, वे तो खुश रहती हैं। मगर जो ऐसे हादसे भूल नहीं पाती, वे अपना आपा खो बैठती हैं। नतीजन जब दिमागी तनाव बढ़ जाता है, तो वे अजीबोगरीब हरकतें करने लगती हैं। इसे ही प्रेतबाधा समझ लिया जाता है।

आज हर शहर, कसबे और गांव में दिमागी इलाज करने वाले डाक्टरों की जरूरत है, जो रोगी के मर्ज को समझ कर, उस से अपनापन दिखा कर उस का इलाज कर सकें।

उन में दूसरी रूचि और आदतें पनपा कर उन के बदन की फालतू ताकत को खत्म करें, ताकि वे आम इनसान की तरह जिंदगी गुजार सकें।

(स्रोतः पुस्तक 'तंत्र मंत्र यंत्र')

साहबजादी की 'करनी'

- डॉ. नरेंद्र दाभोलकर

सतारा में मेरे घर के सामने वाली गली में साहबजादी नामक एक अशिक्षित और गूँगी मुस्लिम महिला रहती थी। जब हम उसके 'चमत्कार' की खोज में लगे थे तब उसने हमारी सतर्कता का मानों घमंड ही चकनाचूर कर दिया था। मुस्लिम समाज के नायब तहसीलदार के घर में न जाने वह कहाँ से प्रकट हुई और सात दिनों में वह गूढ़ चमत्कार के आकर्षण का केंद्र बन गई। उसके पास जाने वालों को वह अपने घर की मिट्टी, बर्तन, पानी और इन चीजों के साथ नींबू भी लाने को कहती थी। बाद में उस व्यक्ति या उसके घर पर करनी हुई है या नहीं, इसका पता लगाने के हेतु जमा नींबू में से दो-तीन काटकर बर्तन के पानी में डालती। उस व्यक्ति द्वारा लाई गई अपने घर की मिट्टी उस पानी में मिलाती। गूँगी होने के कारण उसका भुनभुनाना बंद रहता। कुछ चेष्टाएँ करती और दुबारा नींबू काटकर उस पानी के बर्तन में डालती। फिर संबंधित व्यक्ति को पानी में हाथ डालकर नींबू निचोड़ने को कहती। आश्चर्य यह होता कि तब नींबू निचोड़ने वाले व्यक्ति के हाथ में कील और पिन के साथ तावीज आ जाते। इसका मतलब यह माना जाता कि घर की करनी दूर हो चुकी है और फिर उस औरत को बिना माँगे भारी मात्रा में पैसों की प्राप्ति होती।

स्थानीय केबल द्वारा इस चमत्कार का प्रसारण किया गया। फिर तो इसे दैवी चमत्कार मान लेने का पक्का वातावरण तैयार हो गया।

चुनौती का मसौदा निश्चित हुआ। दोनों ओर से हस्ताक्षर हुए। सुबह दस बजे का समय तय हुआ था, लेकिन संबंधित नायब तहसीलदार को इतना भरोसा था कि सुबह साढ़े नौ बजे से ही फोन पर वे मुझे जल्दी आने का आग्रह कर रहे थे। मैं अपने साथियों के साथ पहुँच गया। पुलिस भी आई थी। चुनौती की प्रक्रिया में पहले ही कह दिया गया था कि यह चमत्कार यदि फरेब सिद्ध हुआ तो जिस नायब तहसीलदार के घर में यह कार्यक्रम हुआ, उसे भी इस फरेब की साजिश में (सहयोगी) शामिल माना जाएगा। लेकिन संबंधित तहसीलदार का साहबजादी पर इतना अटूट विश्वास था कि उन्होंने इसे बिल्कुल नजरअंदाज कर दिया।

सबसे पहले एक औरत सामने बैठी और अपने घर से लाए नींबू, मिट्टी आदि चीजें साहबजादी के सामने रख दीं। फिर एक बर्तन में पानी मँगाया गया। पहले बर्तन में दो नींबू काटकर डाले गए। उसमें थोड़ी मिट्टी भी डाली गई। बाद में कुछ और नींबू काटकर डाले गए और वहाँ आई औरत को बर्तन के पानी में हाथ डालकर नींबू निचोड़ने को कहा गया। औरत के हाथ में कील, तावीज तथा पीन आ गए जो उसने बाहर निकाले। कमरे में सिर्फ साहबजादी और उस पर नजर रख रहे 'अनिस' (ANIS) (Andhashraddha Nirmulan Samiti) (अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति महाराष्ट्र) के कार्यकर्ता और पुलिस थी। सूक्ष्म निरीक्षण के बावजूद यह सब आया कहाँ से, इसका पता किसी को भी न लगा। इसके बाद चुनौती प्रक्रिया शुरू हुई।

पूना से 23 वर्ष की एक लड़की आई थी। उसे लग रहा था कि पिछले चार-पाँच वर्षों से उसके सिर में पीन चुभोए जा रहे हैं। उसे सामने बिठाया गया। फिर एक बार वही सिलसिला आरम्भ हुआ- नींबू, पानी, मिट्टी तथा बर्तन।

प्रक्रिया शुरू होने ही वाली थी कि मैंने कहा, 'साहबजादी की तलाशी लेनी चाहिए।' दो महिला कार्यकर्ताओं ने अंदर जाकर उसकी तलाशी ली। बाहर आकर सिर पर लगी करनी निकालने की शुरूआत होने वाली थी कि मैंने उसके सामने रखे सारे नींबू बदलकर हमारी ओर से लाए गए बारह नींबू वहाँ रखे। कार्यक्रम शुरू हुआ। साहबजादी नींबू काटकर लड़की के सिर पर ज़ोर-जोर से रगड़ने लगी। 12 नींबू खत्म हुए। साहबजादी ने और माँग की। उसका अंदाजा गलत हुआ। उसे लगा था कि अब उसे उसके सामने से उठाए गए नींबू मिलेंगे, लेकिन हमारे पास अभी भी एक दर्जन नींबू थे, जो हमने उसे दिए। लड़की के सिर पर उन्हें भी काटकर रगड़ दिए गए। एक बार फिर नींबू की माँग हुई। हम दौड़-धूप कर बाज़ार से और एक दर्जन नींबू लेकर आए। फिर एक बार वही सिलसिला शुरू हुआ। कुल 38 नींबू काटकर लड़की के सिर पर रगड़ दिए गए। उसके बाल नींबू के रस से लथपथ हो गए। चेहरे पर भी रस ढलक आया था। आँखों में नींबू का रस जाने से लड़की चिल्लाने लगी।

साहबजादी ने कुरान की माँग की। कुछ पढ़ने का नाटक कर कार्यक्रम अगले दिन करने का फैसला सुनाया। उस समय मैंने यह माँग की कि सिर में अक्सर पीन चुभने का अहसास होना एक मानसिक बीमारी है। साहबजादी इस बीमारी का दैवी इलाज कर
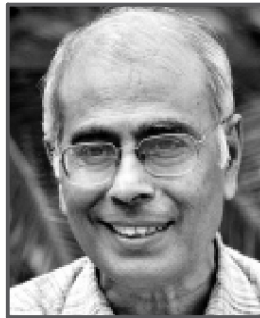
रही है, जो कानूनन अपराध है। इस कारण इसे गिरफ्तार कर उसका सामान भी जब्द कराया जाए।

मेरे यह कहने पर घर से उसकी थैली मँगाई गई जिसमें नींबू निकले। इसके अलावा कार्यक्रम की शुरूआत में जब्त किए नींबू भी थे जिन्हें पत्रकारों और पुलिस के सामने काटा गया। उसमें से चार नींबूओं में अच्छी तरह से अंदर चुभोकर रखी गई पीन, कील, तावीज आदि के साथ पुड़िया मिल गई। साहबजादी कार्यक्रम के लिए बैठते समय अपनी साड़ी में, कमर के पास ये नींबू छुपाकर रखती थी और सामने वाले व्यक्ति द्वारा लाए गए 15-20 नींबू में उन्हें मौका निकालकर मिला देती थी। पहले मामले में उसने इतनी सफाई से यह काम किया था कि उससे बिलकुल चिपककर बैठी महिला कार्यकर्ताओं, सूक्ष्म निरीक्षण करने वाले पुरुष कार्यकर्ताओं और पुलिस को भी उसकी चालाकी का पता नहीं चला था।

गिरफ्तारी के बाद जुर्म कुबूल करते समय उसने बताया कि वह साड़ी में नींबू कैसे छुपाती थी और हाथ की सफाई से कैसे उन्हें निकालती थी। उसने अपने हाथ की सफाई करके दिखाई, जिसे देख हम सभी हक्का-बक्का रह गए। पल्लू के पीछे हाथ ले जाकर साड़ी में छुपाई जगह से नींबू निकालना, मुट्ठी में लेना और सामने वाले नींबू के ढेर में मिलाने जैसी बातें तो वीडियो कैमरे में आने का प्रश्न ही नहीं उठता था, क्योंकि वह कपड़ा और बंद मुट्ठी के पीछे की सृष्टि थी।

दूसरी बार जाँच करने के लिए अंदर ले जाते समय उसे मजबूरन छिपाए हुए नींबू फेंकने पड़े। सामने वाले नींबू के ढेर में उसने पहले से ही करनी किए हुए दो नींबू हू-ब-हू मिलाकर रखे थे। ऐन मौके पर हमने उसके सामने के सारे नींबू अपने कब्जे में ले लिए जिससे उसकी पोल खुल गई। फिर भी उसे आशा थी कि हमारे द्वारा बदलकर दिए गए दर्जन भर नींबू खत्म होने पर हम उसे पहले वाले नींबू देंगे और वह बड़ी सफाई से सिर की करनी बाहर निकालेगी। हम ऐन वक्त पर 38 नींबू बाहर से ले आएँगे, इसकी कल्पना भी उससे नहीं की थी। जिस समय उसे इस बात का अहसास हुआ कि उसके अपने नींबू नहीं मिलेंगे, तब मजबूरन उसे करनी निकालने का कार्यक्रम दूसरे दिन करने के लिए विवश होना पड़ा। सारी महिला कार्यकर्ताएँ उसके इतनी करीब बैठी थीं कि ऐसी अवस्था में वह कमर के पास छुपाए नींबू इन सभी से नजर बचाकर चालाकी से हाथ में लेगी, इसकी कल्पना तक हमने नहीं की थी। इसी कारण महिला कार्यकर्ताओं द्वारा जाँच-पड़ताल करने की आवश्यकता हम में से किसी को भी महसूस नहीं हुई थी। फिर भी 'चमत्कार करने वाले बदमाश होते हैं', इस धारणा को मानकर हमने उसकी जाँच की। नहीं तो कार्यकर्ता, पुलिस, पत्रकार तथा वीडियो कैमरे के सामने वह अपना चमत्कार साबित कर देती।

साहबजादी पर मुकद्दमा दर्ज हुआ, साथ ही अपराध करने के लिए जगह देने वाले नायब तहसीलदार के परिवार वालों पर भी मुकद्दमा दर्ज हुआ। साहबजादी की करनी का उसे भारी नुकसान उठाना पड़ा।

(स्रोतः पुस्तक 'अंध विश्वास उन्मूलनः आचार (दूसरा भाग), संपादकः डा. सुनील कुमार लवटे, अनुवादकः प्रकाश कांबले)'

रोड हिप्नोसिस क्या है ?

किसी भी वाहन की ड्राइविंग करते समय की एक शारीरिक स्थिति है। सामान्यतः लगातार ढाई-तीन घंटे की ड्राइविंग के बाद रोड हिप्नोसिस प्रारम्भ होता है।

ऐसी सम्मोहन की स्थिति में आँखें खुली होती हैं लेकिन दिमाग अक्रियाशील हो जाता है अतः जो दिख रहा है उसका सही विश्लेषण नहीं हो पाता और नतीजतन सीधी टक्कर वाली दुर्घटना हो जाती है।

इस सम्मोहन की स्थिति में दुर्घटना के 15 मिनट तक ड्राइवर को न तो सामने के वाहनों का आभास होता है और न ही अपनी स्पीड का। और जब 120-140 स्पीड से टक्कर होती है तो भयानक दुष्परिणाम सामने आते हैं।

उपरोक्त सम्मोहन की स्थिति से बचने के लिए हर ढाई-तीन घंटे ड्राइविंग के पश्चात् रुकना चाहिए। चाय-कॉफी पियें, 5-10 मिनट आराम करें और मन को शांत करें।

ड्राइविंग के दौरान स्थान विशेष और आते कुछ वाहनों को याद करते चलें। अगर आप महसूस करें कि पिछले 15 मिनट का आपको कुछ याद नहीं है तो इसका मतलब है कि आप खुद को और सहप्रवासियों को मौत के मुँह में ले जा रहे हो।

रोड सम्मोहन अचानक रात के समय होता है जब अन्य यात्री सो या ऊँघ रहे होते हैं, अतः बेहद गंभीर दुर्घटना हो सकती है।

ड्राइवर को झपकी आ जाए या नींद आ जाए तो दुर्घटना को कोई नहीं रोक सकता लेकिन आँखें खुली हों तो दिमाग का क्रियाशील होना अतिआवश्यक है। ध्यान रखें, सुरक्षित रहें, सुरक्षित ड्राइविंग करें।

वातावरण की बर्बादी के असल दोषी कौन ?

- गगनदीप

जब भी पर्यावरण की तबाही के बारे में बात चलती है, तो सरकारों से लेकर टी.वी.,रेडियो और अख़बार सभी लोगों को ही दोषी साबित करने में जुट जाते हैं। लोगों को कहा जाता हैं, ''पर्यावरण की रक्षा करें, इसे बचाएँ!'' लेकिन पर्यावरण को बर्बाद करने वाले असल दोषियों को छुपाया जाता हैं? उनकी जवाबदेही क्यों तय नहीं की जाती? वे कौन हैं? आगे इन्हीं सवालों के जवाब तलाशने की कोशिश करेंगे।

दुनिया-भर में गर्मी बढ़ने के कारण पर्यावरण को होने वाले नुकसान के बारे में सब से ज्यादा शोर मचाया जाता है। यह घटना हवा के प्रदूषण (कार्बन निकासी) से सीधे-सीधे जुड़ी हुई है। कार्बन डाइऑक्साइड जैसी ''हरा ग्रह प्रभाव'' पैदा करने वाली गैसों के बढ़ने से पृथ्वी का तापमान भी तेजी से बढ़ रहा है जिसकी वजह से गंभीर प्राकृतिक संकट (बाढ़, सोखा, तूफ़ान इत्यादि) के रूप में पर्यावरणीय बदलाव आते हैं।

अलग-अलग संस्थाओं के अध्ययनों ने साबित कर दिया है कि दुनिया की सबसे बड़ी और अमीर कंपनियाँ ही पानी, हवा के प्रदूषण, तेज़ाबी वर्षा, दुनिया में बढ़ती गर्मी, जंगलों की अंधाधुंध कटाई, प्राकृतिक आपदाओं और अनेकों पक्षियों और जीव-जंतुओं की प्रजातियों के विलुप्त होने की लिए ज़िम्मेदार है। एक रिपोर्ट के अनुसार, 71 प्रतिशत ''हरा ग्रह प्रभाव'' पैदा करने वाली गैसों को पैदा करने के लिए केवल 100 कंपनियां ही जिम्मेदार हैं, जो कि सालाना अरबों डॉलर का कारोबार करती हैं। इसी तरह दुनिया की बीस सबसे अमीर कंपनियाँ, जो कि एक बार इस्तेमाल में लाई गई प्लास्टिक का 55 प्रतिशत कूड़ा पैदा करती है, जो कि इस कूड़े का निपटारा करने में सक्षम है, लेकिन ऐसा ना करके ये लाखों टन प्लास्टिक का कूड़ा समुंदर में फेंक देती हैं और पृथ्वी के वातावरण को गंदा करती है। दुनिया की सबसे बड़ी और अमीर कंपनियाँ अपने जन्म से ही कारखाने लगाने, बाजार की अंधी दौड़ में आगे बने रहने और अंधाधुंध मुनाफ़ा कमाने की हवस में मानवता और प्रकृति का बेरहम तरीके से विनाश करती आई हैं और आज तक लगातार तरह तरह के प्रदूषण से हमारे वातावरण को बर्बाद कर रही है और सत्ता में बैठी अलग-अलग पार्टियों की सरकारें और देश का सर्वोच्च न्यायलाय इन पर कोई भी कार्रवाई करना तो दूर बल्कि इन कंपनियां के पक्ष में खड़े हैं और अपनी नीतियों और कानून की मदद से इन कंपनियों के रास्ते में आने वाली रुकावटों को दूर करती हैं।

अलग-अलग रिपोर्टों के अनुसार, जब से दुनिया में बड़े-बड़े कारखाने लगने शुरू हुए हैं, तब से वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा 250 पी.पी.एम. (पार्ट्स पर मिलियन) तक ही कार्बन निकासी की जा सकती है, जिसमें से बहुत से हिस्से का इस्तेमाल किया जा चुका है और आने वाले एक दशक तक 500 पी.पी.एम. तक बढ़ जाएगा, जिसकी वजह से दुनिया का तापमान बहुत बढ़ जाएगा और बहुत बड़े स्तर पर वातावरण की तबाही होगी।

पिछले समय विश्व स्तर पर हुए एक सर्वेक्षण में आमदनी और दौलत की असमानता के हिसाब से हरा ग्रह प्रभाव बनाने वाले गैसों की निकासी में बढ़ोतरी के बारे में एक रिपोर्ट पेश की गई है। इस रिपोर्ट अनुसार 1990 से दुनिया के एक प्रतिशत अमीर लोग 23 प्रतिशत कार्बन निकासी के लिए ज़िमेदार हैं। 2019 में 50 प्रतिशत निम्न स्तर के ग़रीब लोगों ने कार्बन निकासी में 12 प्रतिशत की बढ़ोतरी की, जबकि ऊपर के 10 प्रतिशत अमीर लोगों ने 48 प्रतिशत कार्बन निकासी में बढ़ोतरी की। 2019 के आँकडों के अनुसार, विश्व स्तर पर कार्बन निकासी औसतन प्रति व्यक्ति 6 टन के नज़दीक पहुँच गयी है। पृथ्वी का तापमान 1.5 डिग्री सेल्सियस नीचे रखने के लिए औसतन प्रति व्यक्ति कार्बन निकासी आज से 2050 तक 1.9 टन तक रहना चाहिए और उसके **... शेष पृष्ठ 8 पर**

कहानी

मुनाफ़ाख़ोर

- हरिशंकर पारसाई

एक दिन राजा ने खीझकर घोषणा कर दी कि मुनाफ़ाखोरों को बिजली के खम्भे से लटका दिया जायेगा।

सुबह होते ही लोग बिजली के खम्भों के पास जमा हो गये। उन्होने खम्भों की पूजा की, आरती उतारी और उन्हें तिलक किया।

शाम तक वे इंतजार करते रहें कि अब मुनाफ़ाख़ोर टांगे जायेंगे, और अब। पर कोई नहीं टाँगा गया।

लोग जुलूस बनाकर राजा के पास गये और कहा, ''महाराज, आपने तो कहा था कि मुनाफाख़ोर बिजली के खम्भे से लटकाये जाऐंगे, पर खम्भे तो वैसे ही खड़े है और मुनाफाख़ोर स्वस्थ और सानन्द है।'' राजा ने कहा ''कहा है तो उन्हें खम्भों पर टाँगा ही जायेगा। थोड़ा समय लगेगा। टाँगने के लिये फन्दे चाहिये। मैनें फन्दे बनाने का ऑडर दे दिया है। उनके मिलते ही, सब मुनाफ़ाख़ोरों को बिजली के खम्भों से टाँग दूँगा।'' भीड़ में से एक आदमी बोल उठा, 'पर फन्दे बनाने का ठेका भी तो एक मुनाफ़ाख़ोर ने ही लिया है।'

राजा ने कहा, ''तो क्या हुआ ? उसे उसके ही फन्दे से टाँगा जाऐगा।''

तभी दूसरा बोल उठा, ''पर वह तो कह रहा था कि फाँसी पर लटकाने का ठेका भी मैं ही ले लूँगा।''

राजा ने जवाब दिया, ''नहीं, ऐसा नहीं होगा। फाँसी देना निजी क्षेत्र का उद्योग अभी नहीं हुआ है।''

लोगों ने पूछा, ''तो कितने दिन बाद वे लटकाये जाऐंगे।''

राजा ने कहा, ''आज से ठीक सोलहवें दिन वे तुम्हें बिजली के खम्भों से लटकें दीखेंगे।''

लोग दिन गिनने लगे।

सोलहवें दिन सुबह उठकर लोगों ने देखा कि बिजली के सारे खम्भे उखड़े पड़े है। वे हैरान हो गये कि रात न आँधी आयी, न भूकम्प आया, फिर वे खम्भे कैसे उखड़ गये।

उन्हें खम्भे के पास एक मज़दूर खड़ा मिला। उसने बतलाया कि मज़दूरों से रात को ये खम्भे उखड़वाये गये हैं। लोग उसे पकड़कर राजा के पास ले गये।

उन्होने शिकायत की, ''महाराज, आप मुनाफ़ाख़ोरों को बिजली के खम्भों से लटकाने वाले थे, पर रात में सब खम्भे उखाड़ दिये गये। हम इस मज़दूर को पकड़ लाये है। यह कहता है कि रात को सब खम्भे उखड़वाये गये हैं।''

राजा ने मज़दूर से पूछा, ''क्यों रे, किसके हुक्म से तुम लोगों ने खम्भे उखाड़े ?''

उसने कहा, ''सरकार, ओवरसियर साहब ने हुक्म दिया था।''

तब ओवरसियर बुलाया गया।

उससे राजा ने कहा, ''क्यों जी तुम्हें मालूम हैं, मैनें आज मुनाफ़ाख़ोरों को बिजली के खम्भे से लटकाने की घोषणा की थी ?''

उसने कहा, ''जी सरकार!''

''फिर तुमने रातों-रात खम्भे क्यों उखड़वा दिये ?''

''सरकार, इंजीनियर साहब ने कल शाम हुक्म दिया था कि रात में सारे खम्भे उखाड़ दिये जायें।''

अब इंजीनियर बुलाया गया। उसने कहा उसे बिजली इंजीनियर ने आदेश दिया था कि रात में सारे खम्भें उखाड़ देना चाहिये।

बिजली इंजीनियर से कैफ़ियत तलब की गयी, तो उसने हाथ जोड़कर कहा, ''सेक्रेटरी साहब का हुक्म मिला था।''

विभागीय सेक्रेटरी से राजा ने पूछा, ''खम्भे उखाड़ने का हुक्म तुमने दिया था।''

सेक्रेटरी ने स्वीकार किया, ''जी सरकार!''

राजा ने कहा, ''यह जानते हुये भी कि आज मैं इन खम्भों का उपयोग मुनाफ़ाख़ोरों को लटकाने के लिये करने वाला हूँ, तुमने ऐसा दुस्साहस क्यों किया।''

सेक्रेटरी ने कहा, ''साहब, पूरे शहर की सुरक्षा का सवाल था। अगर रात को खम्भे न हटा लिये जाते, तो आज पूरा शहर नष्ट हो जाता! ''

राजा ने पूछा, ''यह तुमने कैसे जाना ? किसने बताया तुम्हें ?''

सेक्रेटरी ने कहा, ''मुझे विशेषज्ञ ने सलाह दी थी कि यदि शहर को बचाना चाहते हो तो सुबह होने से पहले खम्भों को उखड़वा दो।''

राजा ने पूछा, ''कौन है यह विशेषज्ञ ? भरोसे का आदमी है ?''

सेक्रेटरी ने कहा, ''बिल्कुल भरोसे का आदमी है सरकार। घर का आदमी है। मेरा साला है। मैं उसे हुजूर के सामने पेश करता हूँ।''

विशेषज्ञ ने निवेदन किया, ''सरकार, मैं विशेषज्ञ हूँ और भूमि तथा वातावरण की हलचल का विशेष अध्ययन करता हूँ। मैनें परीक्षण के द्वारा पता लगाया है कि जमीन के नीचे एक भयंकर प्रवाह घूम रहा है। मुझे यह भी मालूम हुआ कि आज वह बिजली हमारे शहर के नीचे से निकलेगी। आपको मालूम नहीं हो रहा है पर मैं जानता हूँ कि इस वक्त हमारे नीचे भयंकर बिजली प्रवाहित हो रही है। यदि हमारे बिजली के खम्भे ज़मीन में गड़े रहते तो वह बिजली खम्भों के द्वारा ऊपर आती और उसकी टक्कर अपने पॉवरहाऊस की बिजली से होती। तब भयंकर विस्फोट होता। शहर पर बिजलियाँ एक साथ गिरतीं। तब न एक प्राणी जीवित बचता, न एक इमारत खड़ी रहती। मैनें तुरन्त सेक्रेटरी साहब को यह बात बतायी और उन्होने ठीक समय पर उचित कदम उठाकर शहर को बचा लिया।

लोग बड़ी देर तक सकते में खड़े रहे। वे मुनाख़ाख़ोरों को बिल्कुल भूल गये। वे सब उस संकट से अविभूत थे, जिसकी कल्पना उन्हें दी गयी थी। जान बच जाने की अनुभूति से दबे हुये थे। चुपचाप लौट गये।

उसी सप्ताह बैंक में इन नामों से ये रकमें जमा हुई-सेक्रेटरी की पत्नी के नाम-2 लाख रुपये, श्रीमती बिजली इंजीनियर-1 लाख, श्रीमती इंजीनियर-1 लाख, श्रीमती विशेषज्ञ-50 हज़ार, श्रीमती ओवरसियर-50 हजार।

उसी सप्ताह 'मुनाफ़ाख़ोर संघ' के हिसाब में नीचे लिखी रकमें 'धर्मादा' खाते में डाली गयीं - कोढ़ियों की सहायता के लिये दान-2 लाख रुपये, विधवाश्रम को- 1 लाख, क्षयरोग अस्पताल को-1 लाख, पागलखाने को - 50 हजार, अनाथालय को- 50 हज़ार।

... पृष्ठ 6 का शेष पश्चात शून्य रहना चाहिए। लेकिन यह इतनी मात्रा में कार्बन निकासी धन्ना-सेठों के एक बार लंदन से न्यूयॉर्क आने-जाने के समय में ही पैदा हो जाएगी। जर्मनी की वातावरण से जुड़ी एक संस्था (जी.एन.पी.ए.) की रिपोर्ट के अनुसार लंदन से न्यूयॉर्क तक आने-जाने में प्रति यात्री 986 किलोग्राम कार्बन डाइऑक्साइड पैदा होती है, जो कि 56 देशों के लोगों द्वारा पैदा की जाने वाली सालाना निकासी से अधिक है। एक सर्वेक्षण के अनुसार, इंग्लैंड की केवल 15 प्रतिशत आबादी ही 70 प्रतिशत हवाई उड़ानों से सफर करती है और 15 प्रतिशत ऊपर के अमीर लोग ही है, जिनके मुनाफ़ों और अय्याशी का मूल्य समूची मानवता को चुकाने के लिए मजबूर किया जा रहा है।

2018 में दुनिया-भर के वैज्ञानिकों ने पृथ्वी का तापमान 1.5 डिग्री के आसपास पहुँचने पर इसे वातावरण का आपातकाल घोषित कर दिया है और चेतावनी दी है कि यदि 1.5 से आधा डिग्री भी तापमान बढ़ेगा तो नतीजा दुनिया-भर में लाखों लोगों के लिए पीने के पानी की कमी, सोखा, बाढ़, जंगलों की आग, इत्यादि बढ़ेंगे, लेकिन मुनाफ़े के राक्षसों पर इन चेतावनियों का कोई असर नहीं होता। वातावरण की तबाही के लिए समूची मानवता नहीं बल्कि मुट्ठी-भर धन्ना-सेठ ही दोषी हैं। दोषी मुनाफ़े पर टिकी हुई यह ''पूँजीवादी व्यवस्था'' जो इन सभी समस्याओं की जड़ है, जहाँ प्रकृति के साथ खिलवाड़ समूची मानवता के हितों को आँखों से ओझल कर मुट्ठी-भर धन्ना-सेठों के मुनाफे बढ़ाने के लिए की जाती हैं। पूँजीवादी व्यवस्था में वातावरण की तबाही अटल है। अब इस मानवता के दुश्मन पूँजीवाद का विकल्प केवल और केवल समाजवादी व्यवस्था ही हो सकती है, यहाँ मुनाफे के स्थान पर समूची मानवता और उसके हित केंद्र में होते हैं।

(स्रोतः मुक्ति संग्राम-बुलेटिन 24) (नवंबर 2022)

केस रिपोर्ट

प्यार-मोहब्बत के चक्कर में

– बलवंत सिंह लेक्चरार

सुमन के बचपन में ही उसके पिता जी का देहान्त हो गया था। सुमन की मां सीमा की उस के मायके वालों तथा ससुराल वालों ने आपसी सहमति से उसके देवर के साथ दूसरी शादी करवा दी थी। सीमा की पहले पति से एक ही संतान 'सुमन' थी और दूसरे पति कुलबीर से एक लड़का तथा एक लड़की थे। सुमन अब बी.ए. में पढ़ रही थी। पढ़ाई में वह काफी होशियार थी। अब तक घर में सारा कुछ ठीक चल रहा था। कुलबीर के पास 5 - 6 एकड़ कृषि योग्य जमीन थी। वह बहुत ही परिश्रमी व्यक्ति था। अपनी मेहनत से वह अपनी जमीन से पर्याप्त पैदावार ले लेता था, जिस के कारण सारा परिवार अत्यधिक प्रसन्नता पूर्वक जीवन व्यतीत कर रहा था। परन्तु पिछले कुछ समय से उनके परिवार में कुछ अज़ीबो-गरीब हालात बन गये थे जिससे उनका परिवार परेशानियों से घिर चुका था।

एक दिन सीमा अपनी बेटी के साथ अपने खेतों मे साग तोड़ने के लिये गई थी। पगडंडी पर चलते हुए उन्हें गन्ने के एक खेत में पास ही एक चुन्नी पड़ी हुई मिली। उसे उठा कर देखा तो सीमा ने वह चुन्नी पहचान ली कि वह तो सुमन की चुन्नी थी। जह सुमन की मां ने वे चुन्नी को पहचान कर उससे उसके बारे में पूछा तो सुमन ने उसकी चुन्नी के गन्ने के खेत में पहुँचने के बारे में पूरी तरह से अनभिज्ञता प्रकट की। वे दोनों हैरान थी कि सुमन की चुन्नी घर से काफी दूर गन्ने के खेत में अपने-आप कैसे पहुँच गई। खैर, वे दोनों अपने खेतों से साग तोड़ कर वापिस घर में आ गई। परन्तु अगले दिन घर में एक और अनहोनी हो गई। सीमा अपने घर में धो कर सुखाए हुए कपड़ों को संभाल रही थी तो उसने देखा कि धो कर रखा हुआ सुमन का एक सूट बीच में से कटा हुआ था। परिवार के सभी सदस्य इस घटना से बहुत हैरान एवं परेशान हो उठे। उस से अगले दिन सुमन के कुछ पुराने कपड़े घर से काफी दूर गली में गिरे हुए पड़े मिले। यह देख कर घर वाले और अधिक परेशान हो उठे।

किसी अनहोनी की आशंका से डर कर घर वाले उन सभी कपड़ों को ले कर गांव के एक बाबा के पास पुच्छा के लिए चले गये। उस बाबा ने उन कपड़ों को अपने हाथों में पकड़ा और कुछ मिनटों तक अपनी आंखे बन्द कर के अपने मुँह में बिल्कुल धीमी आवाज में कुछ मन्त्र बुदबुदाता रहा। फिर कुछ समय बाद उसने अपनी आंखें खोली और अपने चेहरे पर कठोरता वाले भाव ला कर घोषणा कर दी कि 'तुम्हारी कन्या पर किसी जानकार दुश्मन ने अपने तंत्र मंत्र द्वारा काले इल्म से वार किया हुआ है।' साथ ही काले इल्म से बचाव के लिए एक तावीज बना कर दे दिया और उन्हे विश्वास दिलाया कि अब आगे से लड़की को कोई खतरा नहीं रहेगा। परन्तु दो-तीन दिन बाद सुमन की हालात खराब होने लग गई। अब सुमन का पढ़ाई करते समय अपने आप ही सिर का हिलना शुरू हो गया। फिर एक दिन सीमा ने देखा कि उनकी अल्मारी में रखे हुए कई कपड़े जगह-जगह से कटे हुए मिले। ऐसा लगता था कि जैसे किसी कैंची के साथ वे सभी कपड़े काटे गये हों। इसके साथ ही सुमन का सिर हिला कर खेलने का मामला और अधिक बढ़ता चला जा रहा था। परेशान हो कर वे फिर से उसी बाबा की शरण में अपनी फरियाद ले कर पहुँच गये। अल्मारी में रखे अपने आप कटे हुए कपड़ों तथा सुमन की ऐसी हालत देख उस बाबा ने अपने हाथ खड़े कर दिये और उन्हें किसी बड़े बाबा के पास जाने की नसीहत दे दी।

उसके बाद सुमन की हालत और अधिक बिगड़ती चली जा रही थी। अब उसे दौरे भी पड़ने लग गये।

पढ़ाई अब उसकी बिल्कुल छूट चुकी थी। अब वह दिन में कई-कई बार सिर घुमा कर खेलने लग जाती तथा सिर घुमाते-घुमाते बेसुध हो कर गिर पड़ती और घंटों तक बेहोश पड़ी रहती। उन के घर में अब हर दूसरे तीसरे दिन कोई न कोई कपड़ा कटा हुआ मिल जाता। कई बार उनके घर से कपड़े भी गायब हो जाते। गायब हुए कपड़े ज्यादातर उन के खेतों में से अथवा खेतों के रास्ते के आसपास पड़े हुए मिल भी जाते। कई कपड़े तो गायब ही हो गए, अभी तक मिले ही नहीं थे। सुमन अब जिद्दी भी बहुत हो गई थी। अपनी मां का कहा तो वह मानती ही नहीं थी।

परेशान हो कर घर वाले उसे अनेक बाबाओं, ओझाओं, मुल्ला-मौलवियों, बाला जी भगतों इत्यादि की शरण में ले कर जाते रहे। बाबाओं की चौकियों पर हजारों रूपये बर्बाद करने के बाद भी सुमन की हालत और अधिक बिगड़ती चली जा रही थी। अब सुमन कई बार अचानक ही घर से गायब हो जाती तथा घंटा दो घंटों के पश्चात् अस्त व्यस्त हालत में खुद ही वापिस घर में लौट कर आ जाती। घर वालों द्वारा पूछने पर ज्यादातर तो वह गुमसुम ही बनी रहती, ज्यादा दबाव देकर पूछने पर वह केवल इतना ही बोल पाती कि कोई 'अदृश्य शक्ति' उसे पकड़ कर खेतों में ले जाती है। यह सुनकर घर वालें और अधिक भयभीत हो जाते।

घर वाले बाबाओं की चौकियों पर अपना बेहिसाब पैसा तथा कीमती समय बर्बाद कर के थक हार चुके थे। उसी दौरान उनके एक परिचित ने, जो तर्कशील सोसायटी के जनहित कार्यों को भली प्रकार से जानता था, पता लगने पर उन्हें मेरा पता देकर उन्हें मेरे पास मनोरोग परामर्श केन्द्र में भेज दिया।

परामर्श केन्द्र में मैंने सुमन व उसकी मां सीमा दोनों को सामने बिठा कर समस्त घटना क्रम की जानकारी प्राप्त की। सीमा ही अपने घर की सारी समस्या के बारे में बताती रही परन्तु सुमन गुमसुम सी बनी हुई बैठी रही। सीमा से सारे घटनाक्रम की जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् मैंने सुमन से अकेले में बातचीत करने तथा समस्या के कारण की जड़ तक जाने के उद्देश्य से सीमा को कमरे से बाहर भेज दिया। पहले पहल तो सुमन किसी प्रकार से सहयोग नहीं दे रही थी, परन्तु मेरे द्वारा सारी बातचीत को गोपनीय रखने के आश्वासन के बाद उसने मन की बात पूर्णरूप से खोल कर रख दी। अपने मन की समस्या को बताने के बाद सुमन अपने आप को बिल्कुल हल्का-फुल्का महसूस कर रही थी, जैसे कि उस के ऊपर से क्विटलों का बोझ उतर गया हो। मनोवैज्ञानिक काऊंसलिंग द्वारा उसके मन में बैठे हुए प्रत्येक प्रकार के मनोभ्रम को दूर कर दिया गया। अगले सप्ताह जब वह अपनी मां के साथ परामर्श केन्द्र में आई को वह अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में थी। उसने तथा उसकी मां दोनों ने बताया कि अब सुमन बिल्कुल ठीक ठाक रह रही है। अब वह गृह कार्य में अपनी मां का पूरा हाथ बंटाती है तथा शेष सारा समय वह तन्मयता के साथ पढ़ाई करती रहती है।

कारण : प्राकृतिक नियम के अनुसार प्रत्येक घटना के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है। परन्तु हमारा समाज अभी तक भी बहुत सी संकुचित मान्यताओं एवं संस्कारों से भरा पड़ा है। एक तरफ तो घरों में चलते हुए केबल टी.वी. तथा लगभग सभी के हाथों में पकड़े मोबाइल फोन हमें देश दुनिया की नई-नई जानकारियां प्रदान करते हैं। इस के साथ-साथ यह भी एक कटु सत्य है कि युवा लड़के एवं लड़कियां इन में अश्लीलता से भरी हुई वीडियो एवं फिल्में ज्यादा दिलचस्पी के साथ देखते हैं। युवा होते हुए शरीर में होने वाले हारमोनों के बदलाव के कारण नौजवान लड़के एवं लड़कियों के मन में एक दूसरे के प्रति आकर्षण होना एक सामान्य सी बात होती है। परन्तु हमारे खासतौर पर ग्रामीण समाज की मान्यताएं युवा लड़के व लड़कियों को आपस में खुल कर मिलने जुलने, यहां तक कि बातचीत करने से भी रोकती है। ऐसे में अनेकों युवा लड़के एवं लड़कियां जब एक दूसरे को पसन्द करने लग जाते हैं तो फिर वे आपस में चोरी छिपे मिलने की ताक में रहते हैं। आजकल हर एक के हाथ में फोन होने से समय मिलने पर वे घंटों आपस में प्यार भरी बातें करते रहते हैं। प्रेम-रस

से भरी हुई बाते करते-करते कई बार उनकी भावनाएं अत्यधिक भड़क उठती हैं और वे चोरी छिपे आपस में मिलने की ताक में रहते हैं। तथा जब वे मौका मिलने पर किसी गुप्त स्थान पर मिलते हैं तो फिर आमतौर पर वे मर्यादा की सभी सीमाएं लांघ जाते हैं। एक बार ऐसा करने पर फिर उनका मन बार-बार वही प्रक्रिया दोहराने को करता है।

सुमन जिस कालेज में पढ़ती थी, उसी कालेज में उनके गांव का लड़का विकास भी पढ़ता था। वे दोनों बस पर ही कालेज में जाया करते थे। धीरे-धीरे बस पर आते तथा जाते समय वे एक दूसरे के नजदीक आते चले गये। वे दोनों ही साधारण परिवारों से थे। उन्हें अपने कालेज के लिये केवल जरूरत के अनुसार ही खर्चा मिलता। अत: वे संपन्न परिवारों के लड़के-लड़कियों की भांति शहर के होटलों में कमरा लेकर मौज-मस्ती नहीं कर सकते थे। परन्तु भावनाएं तो उन के भीतर भी थी, जो कि समय-समय पर भड़क उठती थी। सुमन के खेत उनके गांव के समीप ही थे। अत: वह कई बार अकेली ही अपने खेतों में सब्जी वगैरह तोड़ कर लाने के लिए चली जाया करती थी। एक दिन सुमन अकेली अपने खेत में टमाटर तोड़ कर लाने के लिए गई हुई थी। संयोगवश उसी दौरान विकास भी उस तरफ किसी काम से आ गया। दोनों ने एक दूसरे को देखा और वे दोनों एक दूसरे को मिलने के लिए लालायति हो उठे। दोनों ने आपस में इशारा किया और वे दोनों पास वाले एक गन्ने के खेत में घुस गये। आपस में गले मिलते ही दोनों पूरी तरह से उत्तेजित हो उठे और उन्होंने मर्यादा की सभी सीमाएं लांघ कर तथा नैतिकता को दूर फैंक आपस में शारीरिक संबन्ध कायम कर लिये। इस मिलन ने उन दोनों को अत्यधिक संतुष्टि प्रदान की। किसी द्वारा देख लिये जाने के भय से जल्दबाजी में सुमन अपनी चुन्नी वहीं पर गन्ने के खेत में ही छोड़ आई। एक दो दिन बाद जब सुमन अपनी मां के साथ खेतों में साग तोड़ने के लिये जा रही थी तो पगडंडी के पास गन्ने के खेत में उन्हें वह चुन्नी मिल गई। जब चुन्नी को पहचान कर सीमा ने अपनी बेटी सुमन को इस के बारे में पूछताछ की तो सुमन ने पूर्ण रूप से अनभिज्ञता प्रकट कर दी। घर जा कर सुमन के घर वाले उस की चुन्नी को खेतों में पहुँचने के बारे में बातें करते रहे। सुमन की मां सीमा ने बातों-बातों में कह दिया कि 'हो न हो यह किसी ओपरी-पराई चीज द्वारा किया गया हो।' 'ओपरी-पराई अथवा भूत-प्रेत' का कारनामा सुन कर सुमन के अवचेतन मन को एक प्रकार का सहारा मिल गया। अपनी कमजोरी को छुपाने के लिये सुमन ने कुछ चेतन तथा कुछ अवचेतन तौर पर अगले दिन अपना एक सूट बीच में से ब्लेड से काट दिया जब उसने कटा हुआ सूट अपनी मां को दिखाया तो सारा परिवार ही परेशान हो उठा। फिर अगले दिन सुमन ने इसी मानसिक अवस्था में अपने कुछ पुराने कपड़े अपने घर से कुछ दूर गली में ले जा कर फैंक दिये।

किसी अनहोनी के डर से जब घर वाले उन कपड़ों को ले कर गांव के एक बाबा के पास पुच्छा के लिये गये और बाबा ने इसे किसी दुश्मन द्वारा किसी ''तंत्र-मंत्र द्वारा करवाया गया वार'' घोषित कर दिया तो सुमन के चेतन मन को तो राहत मिल गई परन्तु उसके अवचेतन मन पर आत्मग्लानि के चलते बोझ पड़ना शुरू हो गया। इसी अपराधबोध के चलते कुछ दिनों के पश्चात् सुमन का सिर अपने आप हिलना शुरू हो गया। इसी अवचेतन अवस्था में उसने एक दिन अल्मारी में रखे हुए कई कपड़े घर में रखी हुई कैंची के साथ काट दिये। इसी मानसिक बोझ के कारण सुमन का सिर हिला कर खेलने का मामला और अधिक बढ़ता चला गया। इसी मानसिक परेशानी के कारण उसे दौरे भी पड़ने लग गये थे।

घर वाले सुमन को ज्यों-ज्यों बाबाओं के पास ले जाते रहे, उस की हालत और अधिक खराब होती चली गई। इसी मानसिक अवस्था में वह घर में कपड़े काट देती थी तथा कभी-कभी जब उसके अन्दर शारीरिक हवस की तरंग अत्यधिक वेग से उठ पड़ती तो वह चुपचाप विकास को फोन करके उसे खेतों में बुला लेती तथा खुद दांव लगा कर घर से निकल जाती और जाते हुए जानबूझ कर कोई न कोई कपड़ा अपने साथ ले जाती। उस कपड़े को कई **... शेष पृष्ठ 12 पर**

वैज्ञानिक दृष्टिकोण क्यों जरूरी है ?

-धर्मेंद्र आजाद

वैज्ञानिक दृष्टिकोण मूलत: एक ऐसी मनोवृत्ति या सोच है जिसका मूल आधार किसी भी घटना की पृष्ठभूमि में उपस्थित कार्य-करण को जानने की प्रवृत्ति है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण हमारे अंदर अन्वेषण की प्रवृत्ति विकसित करता है तथा विवेकपूर्ण निर्णय लेने में सहायता करता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण की शर्त है- बिना किसी प्रमाण के किसी भी बात पर विश्वास न करना या उपस्थित प्रमाण के अनुसार ही किसी बात पर विश्वास करना।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से तात्पर्य है कि हम तार्किक रूप से सोचें। जनसामान्य में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना हमारे संविधान के अनुच्छेद 51 ए के अंतर्गत मौलिक कर्त्तव्यों में से एक है। इसलिए प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य है कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास के लिए प्रयास करें।

दुनिया भर में वैज्ञानिक चेतना की बदौलत हो रहे समाज विकास व भारत में अंधविश्वासों, रूढ़ियों, पाखण्डों द्वारा समाज के विकास के रास्ते में डाले जा रहे अवरोधों को दूर करने, एक विवेकशील समाज बनाने के उद्देश्य से ही हमारे संविधान में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को मौलिक कर्त्तव्यों की सूची में शामिल किया गया। इसका मकसद भविष्य में वैज्ञानिक सूचना एवं ज्ञान में वृद्धि से वैज्ञानिक दृष्टिकोण युक्त चेतनासम्पन्न समाज का निर्माण करना था, परंतु वर्तमान सत्य इससे परे है।

जब अपने कार्यक्षेत्र में वैज्ञानिकों का प्रत्यक्ष सामाजिक व्यवहार ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विपरीत हो, तो बाकी बुद्धिजीवियों तथा आम शिक्षित-अशिक्षित लोगों के बारे में क्या अपेक्षा कर सकते हैं।

आज भी हमारा समाज कई तरह के अंधविश्वासों, पाखण्डों की जकड़ में गिरफ्त है। जातिवादी भेदभाव, धार्मिक भेदभाव, ढोंगी बाबाओं का प्रभाव, डायन-चुड़ैल के नाम पर महिलाओं की हत्याएँ, हर काम करने से पहले मुहूर्त देखना, कर्म के बजाय राशि व पूर्व निर्धारित भाग्य पर भरोसा करना, आधुनिक विज्ञान के नियमों को आधार बनाकर वैज्ञानिक चेतना फैलाने के बजाय धार्मिक ग्रंथों में विज्ञान ढूँढना, आधुनिक चिकित्सा पद्धति के बजाय तांत्रिकों, ओझाओं, पीर-फकीरों से इलाज/समाधान की उम्मीद करना आदि आदि।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण का संबंध तर्कशीलता से है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुसार वही बात ग्रहण के योग्य है जो प्रयोग और परिणाम से सिद्ध की जा सके, जिसमें कार्य-कारण संबंध स्थापित किये जा सकें। चर्चा, तर्क और विश्लेषण वैज्ञानिक दृष्टिकोण का एक महत्वपूर्ण अंग है। गौरतलब है कि निष्पक्षता, मानवता, लोकतंत्र, समानता और स्वतंत्रता आदि के निर्माण में भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण कारगर सिद्ध होता है।

आओ तर्कवादी, विवेकशील, वैज्ञानिक दृष्टिकोण युक्त समाज निर्माण करने की ओर आगे बढ़ें।

0 0 0

... पृष्ठ 11 का शेष बार तो वह गली में फैंक देती और कई बार कपड़े को गन्ने के खेतों में फैंक देती। इस प्रकार वह काफी समय तक विकास के साथ खेतों में रंगरलियां मना कर अपने घर वापिस आ जाती। घर वालों द्वारा पूछताछ करने पर ज्यादातर तो वह गुमसुम ही बनी रहती अथवा किसी 'अदृश्य शक्ति' अथवा 'ओपरी-पराई चीज' का बहाना बना देती।

जब सुमन के मां-बाप उसे लेकर मेरे पास परामर्श केन्द्र आये और जब मनोवैज्ञानिक तौर पर उसके साथ लम्बी बातचीत की गई तो उसने अपनी सारी आपबीती मेरे सामने खुल कर सुना दी। फिर मैंने मनोवैज्ञानिक काऊंसलिंग द्वारा उसे उसके क्रियाक्लापों का उसके भविष्य पर पड़ने वाले दुष्परिणामों के बारे में बारीकी के साथ समझाया और साथ ही जब मैंने उसे चेताया कि यदि उसके इन क्रियाक्लापों का उसके घर वालों को पता चल जाए तो इस के क्या परिणाम होंगे? इतना सुनते ही वह हाथ जोड़ने लग गई तथा उसने संकल्प किया कि आगे से वह ऐसे रास्ते पर बिल्कुल भी नहीं चलेगी। तब से वह बिल्कुल ठीक ठाक जीवन व्यतीत कर रही है।

नोट :- यह एक सत्य घटना है, परिस्थितिवश पात्रों के नाम बदल दिये गये हैं। 94163 24802

चार्ल्स राबर्ट डार्विन

- वेद प्रिय
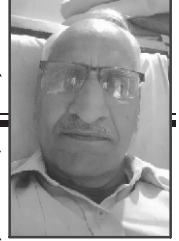
19वीं सदी का पूर्वार्ध यूरोप में बौद्धिक हलचलों का दौर था। स्थापित दार्शनिक अवधारणाओं पर प्रश्न उठने शुरू हो गए थे। भौतिकी ने जो पहल की थी, उसका असर दूसरे विषयों पर भी पड़ने लगा था। उत्पत्ति के प्रश्नों पर बहस होने लगी थी। इसमें पृथ्वी की उत्पत्ति के साथ-साथ इस पर आए जीवों की उत्पत्ति के सवाल थे। शास्त्रों में दिए गए उत्तरों से वैज्ञानिक एवं बुद्धिजीवी सहमत नहीं थे। लैमार्क (फ्रांसीसी प्रकृति विज्ञानी) ने विकास प्रक्रिया का विचार दे दिया था। परंतु इंटेलिजेंट डिजाइन थ्योरी की बहस पर पूरी तरह काबू नहीं पाया जा सका था। परंतु प्रश्न अब दर्शन से बाहर आ चुका था। उत्पत्ति के सवाल पर अध्यात्म, दर्शन एवं विज्ञान आपस में उलझ गए थे।

इन्हीं दिनों इंग्लैंड में डार्विन का जन्म हुआ। इनका जन्म 2 फरवरी, 1809 को हुआ। ये अपने पिता रोबर्ट वारिंग डार्विन की पांचवी संतान थे। इनके दादा इरेसमस डार्विन, एक वैज्ञानिक थे। इनकी माता जी का नाम सुसानाह था। बचपन में ही 8 वर्ष की आयु में इनकी माता जी का निधन हो गया। इनका पालन-पोषण इनकी बड़ी बहन कैरोलिन ने किया। स्कूल की पढ़ाई डार्विन को रास नहीं आई। संयोग से डार्विन का घर घने जंगलों के बीच था। आसपास पर्वत थे। सेवरन नदी पास से गुजरती थी। स्वभाविक है बचपन में ही इन्हें प्रकृति से लगाव हो गया था। ये अपने आसपास के पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों, छोटें जानवरों, तितलियों आदि में रूचि लेने लगे थे। वैसे इनके पिता जी बहुत दयालु थे, फिर भी वे डार्विन को कभी-कभी डांट दिया करते थे कि क्या वह कुत्ते बिल्लियों व पशु-पक्षियों के पीछे घूमता-फिरता है। इन्हें डार्विन के भविष्य की चिंता होने लगी थी। डार्विन का झुकाव अपने मामा की ओर ज्यादा था।
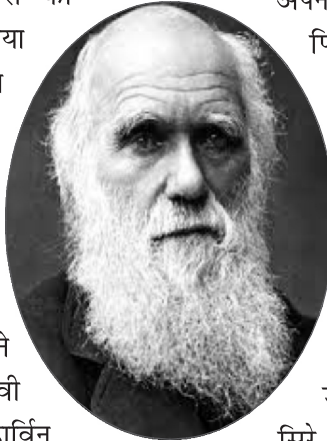
इन्हीं दिनों इंग्लैंड में एक योजना बन रही थी कि समुद्रों के पार नए द्वीपों का अध्ययन किया जाए। सरकार ने इसकी जिम्मेदारी एक नाविक फिट्ज़राय को सौंपी थी। फिट्ज़राय चाहते थे कि इस अभियान में उनका सहयोगी कोई साहसिक नाविक हो। डार्विन को इस समाचार का पता चला। इन्होने इस अभियान पर जाने का मन बनाया। इन्होंने अपने पिताजी से इसकी इजाजत चाही। डार्विन के पिताजी बहुत नाराज हुए। वे चाहते थे कि डार्विन कोई काम-धंधा करें और अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियां पूरी करें। इनके पिता जी ने कहा यदि कोई भी समझदार आदमी आपकी बात का समर्थन कर दें तो मैं इजाजत दे सकता हूं। डार्विन अपने मामा जी के पास गए। उनके सामने इन्होंने प्रस्ताव रखा और मिन्नतें की कि वह किसी तरह से उनके पिताजी को मना लें। डार्विन की योजना सिरे चढ़ गई। इन्हें अपने पिताजी की ओर से हरी झंडी मिल गई।

27 दिसंबर 1831 को 23 वर्ष की आयु में डार्विन बीगल नाम के जलयान में सवार हो गए। यह यात्रा बहुत कठिन थी। डार्विन बीमार रहने लगे थे। लेकिन इन्होंने साहस नहीं छोड़ा। इन्होंने अनेक टापुओं की यात्राएं की। यह अभियान लगभग 5 वर्ष चला। इस दौरान जो कुछ भी इन्होंने देखा उसे उन्होने अपनी डायरी में नोट कर लिया। इन्होंने हज़ारों प्रकार के जीव-जन्तुओं के जीव अवशेषों को एकत्र किया। ये वापस इंग्लैंड लौटे। अब ये पहले वाले डार्विन नहीं रहे थे। इनकी डायरियों के नोट बताते हैं कि इनकी विचारधारा में बदलाव आने शुरू हो गए थे। वे बाइबिल में वर्णित उत्पत्ति के सिद्धांत पर शक करने लग गए

थे। वापस आते ही उन्होंने अपने एकत्र किए हुए नमूनों का बारीकी स अवलोकन एवं अध्ययन शुरू किया। दो वर्षों के गहन अध्ययन के बाद वे इस निष्कर्ष पर आ गए कि जीवों का विकास हुआ है। उन्होंने अपने इस निष्कर्ष को प्रकाशित नहीं करवाया। सन 1842 में इन्होंने स्वयं के साथ इस पर बहस की और इसे 35 पन्नों में लिखा। इसके 2 वर्ष बाद सन 1844 में इन्होंने इस विषय को 230 पन्नों में विस्तार दिया। डार्विन अपनी इस अवधारणा पर और पुख्ता सबूत जुटाना चाहते थे। इसीलिए वह इन्हें प्रकाशित करने की जल्दी नहीं कर रहे थे। इन्होंने अपनी पत्नी एमा को बता दिया था कि यदि मैं मर जाऊं तो वह इन्हें छपवा दे।

तभी एक अनोखी घटना घटी। डार्विन के पास अलफ्रेड रसेल वेलेस (1823-1903) नाम के एक वैज्ञानिक का एक पत्र आया। इस पत्र में वेलेस ने एक निबंध लिखकर भेजा था। इसका शीर्षक था - टेंडेंसी ऑफ़ वैराइटीज टू डिपार्ट इंडेफिनिटली फ्रॉम द ओरिजिनल टाइप . इस पत्र में वेलेस का आग्रह था कि यदि आप उचित समझते हो तो मैं इस लेख को लेयल के पास भेज दूं। खुद डार्विन भी प्रोफेसर लेयल से प्रेरणा लेते थे। लेयल उन दिनों इस विषय में एक बड़ा नाम था। डार्विन ने इस निबंध को पढ़ा। उनके आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा। यह निबंध तो डार्विन के स्वयं के सिद्धांत से मिलती-जुलती बात कह रहा था। डार्विन ने वेलेस के इस निबंध को प्रोफेसर लेयल के पास भेज दिया। प्रोफेसर लेयल पहले से ही डार्विन के कार्य से परिचित थे। इनका सुझाव था कि डार्विन भी अपने सिद्धांत का सार लिखें और इन दोनों ही खोजों को एक साथ प्रकाशित किया जाए। दोनों के सिद्धांत सार एक साथ सन 1859 में - द जर्नल ऑफ द लिनियन सोसाइटी में छपे। इनके प्रकाशित होते ही विज्ञान की दुनिया में एक तहलका मच गया। दर्शन हिल उठा। अध्यात्म की दुनिया डगमगाने लगी। वैज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों ने इसे गौर से पढ़ा। बहुत से वैज्ञानिक इन खोजों के समर्थन में उतरते नजर आए। परंतु वे खुलेआम इसके साथ खड़ा हेने में हिचक रहे थे। क्योंकि यह एक क्रांतिकारी सिद्धांत था। इस सिद्धांत की विशेषता यह थी कि यह पदार्थवादी दर्शन के पक्ष में खड़ा था। यह सिद्धांत कह रहा था कि जैविक विश्व की उत्पत्ति के लिए कोई दैवीय सत्ता जिम्मेवार नहीं है। यह पर्यावरणीय प्रभाव से (कारण) जीवों में आए परिवर्तनी (प्रभाव) की बात करता है। इसमें कारण और प्रभाव के संबंध की अनुपालना है। इसके आधार में संभाविता का सिद्धांत है। एक विशेष भौतिक परिवेश के रहते जीवों के अस्तित्व की संभावना उसी अनुरूप बनती और बदलती है।

डार्विन ने स्वयं लिखा है कि किस प्रकार उनकें विचार इंटेलिजेंट डिजाइन थ्योरी के विश्वास से हटकर भौतिकवादी बने हैं। लेकिन वे सार्वजनिक रूप में इस विचार को स्वीकारने से हिचक रहे थे। क्योंकि डार्विन का पूरा परिवार पक्का आस्तिक था। डार्विन अपनी पत्नी से बहुत डरते थे, जिन्हें बेहद प्रेम भी करते थे। इंग्लैंड का वातावरण भी इस विचार को हजम करने के लिए तैयार नहीं था। डार्विन बहुत शर्मीले थे। वे ऐसी बहसों से बचना चाहते थे। लेकिन उन्होंने स्पष्ट कर दिया था कि मनुष्य सहित समस्त प्रजातियां प्रकृति के नियमों के अंतर्गत ही अस्तित्व में आई हैं। इंग्लैंड और यूरोप की दिक्कत यह थी कि यह खोज ईसायत के विरोध में जा रही थी। इसलिए उस समय इसे ईशनिंदा माना गया।

एंगेल्स ने डार्विन की पुस्तक ''ओरिजिन ऑफ स्पीशीज'' 1859 में प्रकाशित होते ही पढ़ व समझ ली थी। इनका मानना था कि उनकी अपनी पुस्तक ''डायलेक्टिक्स ऑफ नेचर'' इस खोज के बिना अधूरी है। क्योंकि प्राकृतिक विश्व में जैविक दुनिया में द्वंद्वात्मकता की बात इससे पहले अधिकारिक रूप में कभी सामने नहीं आई। एंगेल्स ने इस पुस्तक की चर्चा कार्ल मार्क्स से की। दोनों ने दो वर्षों तक इस पुस्तक पर गहन चर्चा की। दोनों इससे प्रभावित थे। मार्क्स और एंगेल्स का सिद्धांत सामाजिक जीवन में द्वंद्वात्मकता का दस्तावेज है जबकि जैविकी की दुनिया में डार्विन का मत द्वंद्वात्मकता की शर्तों को पूरा करता है। मार्क्स ने भी अपनी पुस्तक ''दास कैपिटल''

की पहली प्रति डार्विन को भेंट दी। विश्व की तीन महानतम पुस्तकों में (एलिमेंट्स-यूक्लिड, प्रिंसिपिया - न्यूटन) के बाद डार्विन की पुस्तक प्रजातियों की उत्पति मानी गई है। न्यूटन के बाद सबसे चर्चित व क्रांतिकारी खोज वही थी। स्वभाविक है हर क्रांतिकारी विचार को बहसों का सामना करना होता है।

बहुत जल्दी ही इनके सिद्धांत पर भी बहस की चुनौती दी गई। पहली बड़ी बहस ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के संग्रहालय में 30 जून सन 1860 को आयोजित की गई। इसमें चर्च के प्रतिनिधि बिशप सैमुअल विलबरफोर्स थे तथा डार्विन के पक्ष की ओर से थॉमस हेनरी हक्सले थे। विचारों पर बहस तो दुनिया में पहले भी (सुकरात, गैलीलियों) आदि बहुत हुई थी। परंतु इस बहस का चरित्र इस मायने में महत्वपूर्ण है कि इसमें बहुत निम्न स्तर पर उतर कर एक दूसरे पर लांछन लगाए गए। विलबरफोर्स ने हक्सले से पूछा-क्या वे स्वयं बंदर की औलाद है? आप अपने पूर्वजों के नाम से अपने माता-पिता की ओर से आए हैं या बंदरों की ओर से आये है, यह मानते हुए आपको शर्म नहीं आती। स्वभाविक है कि विलबरफोर्स, हक्सले के चरित्र हनन पर उतर आए थे। हक्सले ने भी बेहिचक उत्तर दिया-महाशय! मुझे बंदरों को अपना पूर्वज मानने में इतनी शर्म नहीं आएगी, मुझे शर्म तो तब आएगी जब मैं मूर्खता से अनहोंने पूर्वजों को अपना पूर्वज स्वीकार करूं। यहां तक की चर्च ने हक्सले को डार्विन का कुत्ता तक कहा। सैद्धांतिक रूप में चर्च के पास हक्सले के तर्कों का कोई जवाब नहीं था। डार्विन स्वयं किसी धार्मिकता की बहस में नहीं उलझे।

एडवर्ड अवेलिंग, डार्विन के प्रबल समर्थक थे। वे जीव विज्ञान के प्रोफेसर थे। उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक-''द स्टूडेंट्स डार्विन टू डार्विन'' लिखी। यह पुस्तक सीधे-सीधे अध्यात्म पर हमला थी, तथा नास्तिकता को बढ़ावा दे रही थी। अपनी इस पुस्तक को वे डार्विन को समर्पित करना चाहते थे। इन्होंने डार्विन से इसकी अनुमति चाही। लेकिन डार्विन ने स्पष्ट इंकार कर दिया। डार्विन ने कहा, मैं विचारों की स्वतंत्रता का समर्थक हूं। मैं विज्ञान के पक्ष में अपनी बात कहूंगा। यह लोगों के मस्तिष्क एवं निर्णय पर निर्भर करेगा कि वह किस का समर्थन करते हैं। लेकिन डार्विन कभी भी विवादों से परे नहीं रह पाए। घटना सन 1875 की है। म्यूनिख शहर में विज्ञान कांग्रेस चल रही थी। इसकी अध्यक्षता आर विरचौव कर रहे थे। ये स्वयं डार्विन की खोज के कायल थे। इस कांग्रेस में डार्विनवाद परचा पढ़ा जाना था। स्वयं विरचौव ने इसका जबरदस्त विरोध किया। उन्होंने कहा कि हमें अपनी पीढ़ियों को डार्विन नहीं पढ़ाना चाहिए क्योंकि यह विचार समाजवाद के लिए पृष्ठभूमि तैयार करने वाला विचार है। पूंजीवादी विचारकों ने डार्विनवाद को विकृत करने की कुचेष्टा भी की। एंगेल्स ने इसका करारा जवाब दिया है।

हाल ही में (सन 2005) संयुक्त राज्य अमेरिका की एक अदालत पैनीसिल्वेनिया में निर्णय आया है। इसमें मुद्दा उठाया गया था कि डार्विनवाद पर प्रतिबंध लगाया जाए तथा इसे शिक्षा के पाठ्यक्रम से निकाला जाए। यह पक्ष इंटेलिजेंट डिजाइन थ्योरी की हिमायत वालों ने रखा था। माननीय न्यायाधीश जॉन ने फैसला सुनाते हुए कहा- To be sure, Darwin's theory of evolution is imperfect. However the fact that a scientific theory cannot yet render an explanation on every point should not be used as a pretext to thrust and intestable alternative hypothesis grounded in religion into the science classrooms or to misrepresent well established scientific propositions. डार्विन की खोज में आखिर ऐसा क्या है? यह जैविक दुनिया में हेतुवाद पर सबसे प्रबल प्रहार है। हेतुवाद यह मानता है कि पृथ्वी पर मनुष्य की रचना एक उद्देश्यपूर्ण कार्य है। इससे पहले तो ब्रह्मांड का भौतिकीय मॉडल ही पुनरव्यवस्थित किया गया था। लेकिन अब तो जैतिक दुनिया में भी रचयिता के लिए जगह नहीं बची थी। 18 अप्रैल, 1882 को डार्विन इस दुनिया को अलविदा कह गए। ब्रिटेन की संसद ने निर्णय लिया और इन्हें सम्मान पूर्वक वेस्टमिनिस्टर ऐबे (जहां राजशाही या अति विशिष्ट व्यक्तियों को दफनाया जाता है/में दफनाया गया।

बच्चों के लिए अर्थशास्त्र

-रंगनायकम्मा

2. चीज़ क्या होती है ?

अभी-अभी हमने पैसों को भी एक चीज कहा। पर इसका मतलब यह नहीं कि हम जान चुके हों कि पैसे क्या होते हैं? पहले यह देखना जरूरी है कि कोई 'चीज़' क्या होती है?

चीज वह है जिसे इनसान बनाते हों। जिसे इनसान ने बनाया न हो, पर कुदरती तौर पर पाया जाता हो वह चीज नहीं होती। क्या 'हवा' कोई चीज है? नहीं। हवा कुदरत में पायी जाती है। इसे किसी इनसान ने बनाया नहीं होता। इसे कहते हैं : 'कुदरती पदार्थ'।

क्या 'धरती' कोई चीज है ? इसे किन्हीं इनसानों ने बनाया नहीं है। धरती पर होते हैं पहाड़, नदियाँ और समन्दर। ये सब कुदरती हैं। जंगलों के पेड़ों पर जो फल और फलियाँ होती हैं, उन्हें क्या किसी ने बनाया होता है ? नहीं न ? इसीलिए ऐसी तमाम चीजें कुदरती ही होती हैं।

जिन चीजों को इनसान बनाते हों, उन्हीं को हम 'चीज' कहते हैं। यह पुस्तक जो हम पढ़ रहे हैं, चीज है। इसे कुछ लोगों ने बनाया है। जो कपड़े हम पहनते हैं वे चीज हैं। जिस कुर्सी या बेंच पर हम कभी बैठते हों, जिस बिस्तर पर हम सोते हों; जिस कलम या पेंसिल से हम लिखते हों, जो दाल, चावल या सब्जी खाते हों, जिस घर में रहते हों, जिस स्कूल में हम पढ़ने जाते हों; जिस साइकिल, बस, ट्रेन या कार से सफर करते हों - इनमें से कोई एक या दूसरी ही नहीं, बल्कि सारी ही चीजें चीज हैं। इसलिए कि हर एक को इनसानों ने बनाया है।

रोज-रोज हम चीजों को बनाते हुए और उनका इस्तेमाल करते हुए ही जी पाते हैं। लेकिन ऐसा भी एक वक्त था जब ये सारी चीज़ें थी ही नहीं। तब इनसान तो थे, पर इनसानों को चीज़ें बनाना नहीं आता था। उस वक्त एक भी चीज नहीं थी।

ज़मीन पर तरह-तरह की घास और पेड़-पौधे जड़ पकड़ते हैं और अपने आप ही बढ़ जाते हैं। यही पेड़ फूलों और फलियों से लद जाते हैं। नदी-तालाबों में मछलियाँ जन्म लेती हैं और पलती हैं। जंगलों में होती हैं मुर्गियाँ, खरगोश, हिरन, बहुत सारे और जानवर।

जिन दिनों इनसान को चीज़ें बनाना नहीं आता था, उन दिनों लोगों के पास कोई कपड़े नहीं होते थे। वे नंग-धड़ंग घूमते थे। वैसे ही जैसे जानवर। कोई मकान नहीं थे। इसीलिए लोग पेड़ों की छाँव में रहा करते थे। या फिर पहाड़ों में जगह-जगह पायी जाने वाली गुफाओं में। न तो कोई चावल होता था, न रोटी, न ही दाल-सब्जी। इसीलिए लोग पेड़-पौधों से ही फल-फलियाँ चुनते और यही खाकर जी लेते थे। अपने हाथों से ही तालाबों से मछली पकड़ लेते और कच्चा खा जाते। अभी मछली पकड़ने के लिए जाल जैसी कोई चीज नहीं आयी थी। लोग अभी आग जलाना भी नहीं जानते थे। इसीलिए मछली या सब्जी भूनना भी नहीं जानते थे। उस वक्त के इनसान जानवरों की ही तरह घास-पात बगैरह खा लेते थे। काफी लम्बे समय तक जानवरों-सा जीवन जीने के बाद धीरे-धीरे इनसानों ने जानवरों का शिकार करना सीखा। आग की खोज की। कन्द-मूल, मछली और गोश्त भूनना सीखा। जरूरत के अनुसार मिट्टी के बर्तन बनाना जैसे कामों को अंजाम दिया और तरह-तरह की वस्तुएँ बनाते गये। तमाम चीजें बनाते-बनाते बन गये तन ढँकने के लिए कपड़े भी। और रहने के लिए मकान। फिर आये खान के लिए तरह-तरह के पकवान। और पाँवों में पहनने के लिए जूते, पढ़ने के लिए किताबें बगैरह। एक-एक की क्या बात करें, जिन भी चीजों का हम आज इस्तेमाल करते हैं वे सब इसी तरह आती चली गयीं।

पर क्या आप जानते हैं कि चीजों को बनाया कैसे जाता है? चलिए, हम आगे इसे देखते हैं।

सवाल और जवाब

[अब से आपको हर सवाल के नीचे जवाब मिलेगा। सवाल पढ़ने के बाद जवाब तुरन्त मत पढ़िए! पहले सवाल का जवाब क्या होगा, खुद सोचिए! उसके बाद ही सवाल के नीचे दिया हुआ जवाब पढ़िए। आपके किसी जवाब में कोई भूल हुई हो, तो सुधार लीजिए। ऐसा हर पाठ के बाद करते चलिए।]

1. कोई चीज क्या होती है ?

जवाब : जिस किसी को इनसानों ने बनाया हो, वह चीज होती है।

2. धरती क्या है ? वह कोई चीज है ?

जवाब : धरती कोई चीज नहीं। यह कोई ऐसी चीज नहीं जिसे इनसानों ने बनाया हो। धरती कुदरत में कुदरती तौर पर होती है।

3. 'कुदरत' क्या है ?

जवाब : जो किसी इनसान के बनाये बगैर पहले से ही मौजूद हो।

4. धरती और हवा के अलावा कुछ और कुदरती पदार्थों का नाम बताएँ ?

जवाब : जंगल में पेड़, पौधे और पशु; समुन्द्र में मछलियाँ, आसमान में बादल; धरती में समाये हुए धातु।

5. सूरज, चाँद और तारे क्या हैं ?

जवाब : कुदरती पदार्थ।

6. इनसान क्या हैं ?

जवाब : इनसान भी कुदरत का ही हिस्सा हैं।

7. वस्तुओं के कुछ नाम बताएँ।

जवाब : पुस्तक, कलम, कपड़े, जूते, मकान, रोटी, कम्बल।

8. 'वस्तु' और 'जमीन' में क्या कोई फर्क है ? सोच कर बताइए।

जवाब : वस्तुएँ कुछ समय बाद किसी काम की नहीं रह जातीं। जबकि जमीन (धरती) हमेशा-हमेशा तक रहती है।

3. इनसान 'चीजों' को बनाते कैसे हैं ?

उदाहरण के तौर पर हमें कोई चीज लेनी होगी। 'कमीज' लेते हैं। कमीज एक चीज है। है न? कमीज कैसे बनती है?

पहले हमारे पास 'कपड़ा' होना चाहिए। सिर्फ इतना ही ? क्या कपड़ा ही काफी होगा ? कमीज क्या सिर्फ कपड़े मात्र से ही तैयार हो पाती है ? नहीं। 'सुई' जरूरी होगी, 'धागा' भी चाहिए होगा। और 'बटन' भी। कपड़ा काटने के लिए 'कैंची' जरूरी होगी।

तो आइए, हम कपड़ा, सुई, धागा और कैंची एक जगह रख लेते हैं। हम इनसे कुछ दूरी पर बैठ जाते हैं। इनकी ओर कुछ देर तक देखते भी नहीं हैं। फिर कुछ समय बाद देखने चले जाते हैं। अब क्या हमें कमीज तैयार मिल जाएगी ? नहीं, ऐसा नहीं होता। जिन भी चीजों को हमने एक जगह रखा था वे सब जस की तस मिल जाती हैं। बिल्कुल जहाँ की तहाँ।

तो फिर कमीज तैयार करने के लिए और क्या-क्या होना जरूरी है? किसी इनसान का होना जरूरी है। ऐसा जो कपड़ा काटना और कमीज सिलना जानता हो।

मान लेते हैं कि पार्वती इन सभी कामों को अच्छे से करना जानती हैं। अगर हम उनसे कमीज सिलवायें, तो देखिए, वे क्या-क्या करती हैं ? कमीज जिस भी नाप की बनवानी हो, पहले वे कैंची से उस नाप का कपड़ा काट लेती हैं। क्या यह काम कैंची के बिना हो सकता है ? नहीं। कैंची हो, यह जरूरी है। कपड़ा कट जाये, तो उसे कमीज के आकार में सिलना होता है। सुई में पहले धागा पिरोना पड़ता है। जिसे सीना न आता हो, उसे सुई में धागा पिरोना भी नहीं आता होगा। सुई में धागा पिरो लेने के बाद ही कोई सी सकता है। सीने का काम हाथ से भी किया जा सकता है और मशीन से भी। मशीन से सीना हो, तो अपने पास सिलाई मशीन होनी चाहिए।

मान लें कि पार्वती हाथ से ही सीना जानती हो। और अब वे अपने हाथों से उस कपड़े की कमीज सिल चुकी हो। कमीज पर बटन भी टाँक दी हो। यह सब कर लेने के बाद वे कमीज को सलीके से तह कर लेती है और संभाल कर रख देती हैं। इस तरह अब नयी कमीज बन कर तैयार हो जाती है। यह एक नयी बनी चीज है। एक 'तैयार उत्पाद।' इसका कोई अब इस्तेमाल कर सकता है।

अब बताइए, यह कमीज कैसे बन गयी ? कमीज बनाने के लिए हमें कपड़े, सुई, धागे और कैंची की जरूरत होती है। ठीक ? ये सब क्या हैं ? ये सब खुद भी एक-एक चीज हैं। ये सारी चीज़ें कमीज बनने से पहले बन चुकी हैं। इन्हें भी कभी बनाया गया था। वैसे ही जैसे अभी कमीज को बनाया गया है। क्या इनके बिना कमीज तैयार हो पाती है ? कपड़ा, धागा और कैंची के बिना क्या कमीज तैयार हो सकती है ? कोई नया उत्पाद तभी बन सकता है जब उसे बनाने के लिए जो-जो पुरानी चीजें जरूरी हों, वे सब हमारे पास पहले से तैयार हों।

अपने इस्तेमाल के मुताबिक इन पुरानी चीजों के अलग-अलग नाम होते हैं। कमीज बनाने के लिए हमारी सबसे पहली जरूरत 'कपड़ा' है। है न ? यह कपड़ा कमीज बनाने का 'कच्चा माल' है। हम इसे कच्चा माल इसलिए कहते हैं क्योंकि... क्या हम इस कपड़े को यूँ ही पहन लेते हैं ? नहीं, हम कपड़े को नहीं पहनते। पहले इसकी कमीज बनवाते हैं। उसके बाद ही पहन पाते हैं। यह तब तक 'कच्चा माल' होता है जब तक कपड़े के रूप में हो। सिर्फ कपड़ा ही नहीं, जितनी भी चीजें कमीज में हों, सभी कच्चा माल होती हैं। कमीज की सिलाइयों में धागा होता है। कमीज पर बटन टँके होते हैं। इन सभी को मिलाकर कमीज बनी होती है। है न? पुरानी जो भी चीजें नये उत्पाद का हिस्सा बनती हों, वे सब इस नये उत्पाद के कच्चे माल हैं।

अच्छा फिर, अब 'कैंची' क्या है ? और 'सुई' ? क्या ये भी कमीज में सिली हुई हैं ? नहीं, वे सिली हुई नहीं हैं। कपड़ा काटने के बाद कैंची उस कपड़े से अलग रख दी जाती है। इसी तरह सुई भी कमीज सिल जाने के बाद उससे बाहर निकल आती है। न तो कैंची कमीज के अन्दर रहती है, न ही सुई। इसीलिए ये दोनों कच्चा माल नहीं हैं। ऐसी चीजों का नाम अलग होता है। इन्हें 'औजार' कहते हैं।

दोनों ही चीजें काम करने के औजार हैं। कैंची काटने का औजार है। सुई सीने का औजार है। इनके और नाम भी हैं-

‘**उपकरण**’ और ‘**यन्त्र**’। सभी नामों का एक ही मतलब है।

तो अमने अभी क्या सीखा है ? कमीज बनाने के लिए किन-किन चीजों की जरूरत होती है ? तीन किस्म की चीजें जरूरी हैं :

1. कच्चे माल की जरूरत है (कपड़ा, धागा और बटन)।

2. औजारों की जरूरत है (कैंची और सुई)।

3. एक सिलाई करने वाले व्यक्ति की जरूरत है। (क्या इसका मतलब यह है कि जरूरत पार्वती की ही है ? नहीं, पार्वती ही ज़रूरी नहीं। जरूरत ऐसे व्यक्ति की है जो यह काम कर सके)।

अगर हम इस तैयार क्मीज को देखें तो इसमें कच्चे माल तो दिखाई देते हैं, पर औजार दिखाई नहीं देते। कमीज में औजार इसलिए दिखायी नहीं देते कि वे कमीज के अन्दर नहीं होते। कमीज बनाते वक्त जितने भी काम किये गये हों वे सब भी दिखायी देते हैं। कपड़ा काटा जाना और कमीज के आकार में सीया जाना हमें दिखायी देता है। मगर जिस इनसान ने ये सारे काम किये हों वह दिखाई नहीं देता।

यहाँ कपड़ा काटने का काम किसने किया है ? पार्वती ने या कैंची ने ? और सीने का काम किसने किया ? पार्वती ने या सुई ने? सोचिए इस पर!

सवाल और जवाब

1. ‘कमीज’ क्या है ?

जवाब : यह एक चीज है।

2. चीज के लिए कोई और नाम भी है ?

जवाब : हाँ, है। इसे ‘उत्पाद’ या ‘वस्तु’ भी कह सकते हैं।

3. कमीज तैयार करने के लिए क्या-क्या जरूरी होता है ? ये सब हैं क्या ?

जवाब : कपड़ा, कैंची, सुई, धागा और बटन। ये सब भी चीजें हैं। ये कमीज बनाने से पहले बनी चीजें हैं। किसी चीज (या उत्पाद या वस्तु) को बनाने के लिए जो चीजें जरूरी हों उन्हें ‘उत्पादन के साधन’ कहा जा सकता है।

4. इन वस्तुओं को किसने और कहाँ बनाया ?

जवाब : यह हम नहीं जानते।

5. कमीज बनाने के लिए कपड़ा जरूरी है। यानि कपड़ा कच्चा माल है। लेकिन जब कपड़े की कमीज बन जाये, तब तो वह ‘तैयार वस्तु’ हो जाती है। है न ? फिर कपड़ा कच्चा माल कैसे हो सकता है ?

जवाब : जब कपड़ा बन जाता है तब वह ‘तैयार’ वस्तु होता है। लेकिन क्या हम इसी कपड़े को अपने तन पर लपेट लेते हैं ? क्या इसे वस्त्र के रूप में बदलना नहीं पड़ता ? कपड़े को कमीज के रूप में बदलने का तात्पर्य यह है कि जो वस्तु पहले से तैयार थी उसे अब किसी और वस्तु में बदला जा रहा है। जो चीज किसी और चीज में बदली जानी हो वह कच्चा माल होगी।

6. कपड़ा, धागा और कपास में से कमीज के कच्चे माल क्या होंगे ?

जवाब : कमीज चूँकि कपड़े की बनती है, इसलिए कपड़ा ही कमीज का कच्चा माल है। कमीज के लिए यह बात कोई मायने नहीं रखती कि कपड़े का कच्चा माल क्या था ? कमीज की उत्पादन प्रक्रिया में तो कपड़ा ही कच्चा माल है। धागा या सूत कपड़े का कच्चा माल होगा और कपास सूत कच्चा माल होगा।

7. कैंची क्या है ? वह तैयार वस्तु है या नहीं ?

जवाब : कैंची औजार है। वह तैयार वस्तु है। किसी और चीज में तबदील नहीं होती। हर औजार एक तैयार वस्तु ही होता है।

8. किसी नयी वस्तु को तैयार करने के लिए तीन तरह की चीजें जरूरी होती हैं। वे क्या हैं ?

जवाब : (1) कच्चा माल, (2) औजार, (3) उस काम को करने वाले इनसान।

कच्चा माल और औजार मिलकर ‘उत्पादन के साधन’ बनते हैं।

(स्रोत : पुस्तक ‘‘बच्चों के लिए अर्थशास्त्र’’ (मार्क्स की ‘**पूँजी**’ पर आधारित पाठ)

- रंगनायकामा (तेलुगू मूल)

हिन्दी अनुवाद : प्रशान्त राही)

तमाचा

जब तक
हस्पताल के सामने
सड़क पर
एक औरत
बच्चा
जनने को मजबूर है
तब तक
सारी डिग्रियाँ
सारी सुविधाएँ
या नित नई खोजें
मानवता के गाल पर
एक तमाचा है!

मनीषा

क्या स्त्रियाँ सचमुच अधिक अन्धविश्वासी होती हैं ?

– शरद कोकास
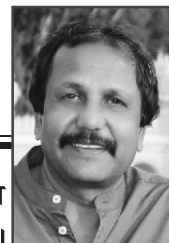
अन्धविश्वास ऐसा विषय नहीं है जिसे पुरुष या स्त्री जैसे खानों में बांटकर देखा जाए। एक सामान्य समझ के अनुसार पुरुष जितने अन्धविश्वासी होते हैं स्त्रियाँ भी उतनी ही अन्धविश्वासी होती हैं। लेकिन इस पितृसत्तात्मक समाज में यह बात प्रचारित कर दी गई है कि स्त्रियाँ कम पढ़ी लिखी होती हैं, कर्मकांड और परम्पराओं को अधिक मानती हैं, पाखंडी बाबाओं के चक्कर में अधिक फँसती हैं इसलिए वे अधिक अन्धविश्वासी होती हैं।

इस लेख में इसी बात की पड़ताल करेंगे।

हमारे पिछड़े हुए समाज में इस बात को एक मिथक बना दिया गया है कि पुरुषों की तुलना में स्त्रियां अधिक अंधविश्वासी होती हैं। इस बात की पड़ताल करते हुए इसका खंडन प्रस्तुत कर रहे हैं कवि और स्वतंत्र लेखक शरद कोकास।

इतिहास में हमें एक ऐसे समय के बारे में ज्ञात है जब शिकारी और अनाज संग्रहण की अवस्था से होते हुए मनुष्य कृषि अवस्था तक आया था। कृषि की खोज स्त्रियों ने ही की थी यह बात अब निर्विवाद है। पुरुष जब शिकार खेलने चला जाता था और स्त्री गर्भावस्था में अथवा बच्चों की देखभाल के लिए घर पर ही रहती थी। तब उसने पृथ्वी में बीज बोना प्रारम्भ किया, तत्पश्चात् हल की खोज हुई और पुरुष ने कृषि में उसे सहयोग देना प्रारम्भ किया।

कालांतर में आदिम मनुष्य के जीवन में धर्म तथा ईश्वर की धारणा ने प्रवेश किया। फलस्वरूप उसके जीवन में विश्वास के साथ कर्मकांड और देवी देवताओं को प्रसन्न करने की विविध विधियाँ भी जुड़ती गईं। मनुष्य ने जीने का तरीका सीखा, विभिन्न विधि विधान उसके जीवन में प्रारम्भ हुए जिन्हें उसने संस्कारों का नाम दिया।

पितृसत्तात्मक समाज की विडम्बना यह है कि मनुष्य के अच्छे संस्कारों का श्रेय पिता को दिया जाता है लेकिन संस्कार अच्छे न होने का जिम्मेदार माता को ठहराया जाता है। विवाहित स्त्रियों को अक्सर ससुराल में इस बात का सामना करना पड़ता है। अंधविश्वासों के लिए भी सामान्यतः यह माना जाता है कि बच्चों के भीतर अन्धविश्वास के संस्कार डालने में माँ का योगदान होता है।

अंधविश्वासों का सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप से हमारे मस्तिष्क से ही होता है। बचपन में अधिकांश समय बच्चे माँ के साथ बिताते हैं जो उनकी ब्रेन ट्रेनिंग करती है।

– समाज में यह एक सामान्य दृश्य है कि बच्चे के रोने पर माँ पहले तो उसे समझाती है, प्रलोभन देती है, फिर उसे चुप करने के लिए एक तमाचा जड़ देती है और कहती है ''अब रोया तो अँधेरे में फेंक दूंगी।'' या ''तुझे भूत ले जायेगा'' ''चुप हो जा! देख! अंधेरे में भूत है। कमरे में बन्द कर दूंगी। शैतान है वहाँ! भूत से पकड़वा दूंगी! भूत बहुत मारेगा तुझे।''

फिर वह बच्चा जीवन भर अँधेरे का अर्थ भय, पाप, बुराई, भूत-प्रेत और बुरी शक्तियों से जोड़ता है। वह यही समझता है कि सारे बुरे काम अंधेरे में होते हैं। अंधेरा होते ही बच्चों को घर लौटने को कहा जाता है। लड़कियों के लिए तो अँधेरे को लेकर और भी बंधन हैं।

–यहाँ मैं माताओं का उदाहरण इसलिए दे रहा हूँ कि हमारे भारतीय परिवारों में अधिकांश समय मातायें ही बच्चों की देखभाल करती हैं और उनकी देखभाल करते हुए ही उन्हें अपने रोज़मर्रा के काम निपटाने होते हैं। यद्यपि उनके बच्चों में केवल लड़के ही नहीं बल्कि लड़कियां भी होती हैं। उनके कोमल मन पर इस बात का असर अधिक होता है।

फिर से अत्याचार से बचने के लिए ईश्वर और अंधविश्वास का आलंबन लेते हैं।

–हमारी अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के पास ऐसे अनेक प्रकरण आते हैं जिनमें बताया जाता है कि फलां फलां गाँव में एक स्त्री को भूत आते हैं। समिति द्वारा जाँच करने पर यह पाया गया कि इसका प्रमुख कारण उनकी मानसिक समस्या होती है।

सामान्यत: घर में अथवा ससुराल में स्त्रियों को पितृसत्ता के कारण प्रताड़ना सहन करनी पड़ती है जिस वजह से उनका तनाव बढ़ जाता है और वे अवसाद, स्कीज़ोफ्रेनिया, हिस्टीरिया जैसी मनोकायिक बीमारियों से ग्रसित हो जाती हैं। इन सभी बीमारियों के विभिन्न लक्षण शरीर पर दिखाई देते हैं जो भूतबाधा जैसे लक्षणों से मिलते हैं।

सामान्य जन इन लक्षणों के बारे में जानकारी के अभाव में अथवा अपने बचपन से अपने अवचेतन में स्थित भूत प्रेत आदि की अवधारणा के कारण इन्हें भूतबाधा मान लेते हैं।

-कुछ स्त्रियाँ बचपन से ही वरिष्ठ लोगों द्वारा प्राप्त ज्ञान की वैज्ञानिक चेतना के अनुसार विश्लेषण करती हैं, अत: उन्हें यह बात भलीभांति ज्ञात होती है कि शरीर में भूत प्रेत आना, देवी देवता आना, जैसी कोई बात नहीं होती।

लेकिन ये सामान्य जनों के अज्ञान का लाभ उठाती हैं और सास ससुर, जेठ जेठानी जैसे घर के किसी सदस्य या समाज के किसी व्यक्ति द्वारा प्रताड़ित किये जाने पर शरीर में भूत आ जाने या देवी देवता आ जाने का अभिनय भी करती हैं।

इसका लाभ यह होता है कि उन्हें सताना बंद कर दिया जाता है। कई बार तो उनकी पूजा भी होने लगती है।

भूत-प्रेत बाधा जैसे अन्धविश्वास के कुछ मामले ऐसे भी होते हैं जिनमें किसी गाँव में घर पर पत्थर गिरते हैं, कहीं अपने आप घर के कपड़ों में या बिस्तर में आग लग जाती है, कहीं घर में रसोई में मल मूत्र पाया जाता है। सामान्यत: लोग समझते हैं कि ऐसा किसी शैतानी हरकत द्वारा या किसी दैवीय प्रकोप के कारण हो रहा है।

अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति द्वारा ऐसे सैकड़ों प्रकरणों की पड़ताल की गई और हर केस में यह पाया गया कि उसमें किसी न किसी मनुष्य का ही हाथ है।

-इस तरह के परेशान करने वाले काम सामान्यत: घर के ही किसी सदस्य द्वारा लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिये किये जाते हैं। जैसे दो बहनों में यदि एक को माता पिता द्वारा अधिक प्यार दिया जाता है और दूसरी को कम तो वह दूसरी बहन इस स्थिति में वह स्वयं को अपमानित महसूस करने लगती है और बहुत चालाकी और सतर्कता के साथ ऐसे काम करने लगती है जिससे लोगों का ध्यान आकर्षित हो।

बेटों को सामान्यत: इन बातों की चिंता नहीं होती इसलिए स्त्रियों की संख्या ही इसमें अधिक होती है। समिति ने ऐसे कई प्रकरण उजागर किये और माता पिता या समाज द्वारा बच्चों की उपेक्षा किये जाने की ओर उनका ध्यान आकर्षित करवाया।

महिलाओं को अधिक अन्धविश्वासी समझा जाने का एक और कारण पाखंडी बाबाओं द्वारा उनका शोषण किया जाना है।

-अपने बचपन की मान्यताओं के कारण साधू संतों, बाबाओं, फकीरों आदि में विश्वास करने वाली महिलाएं अपनी समस्याएँ लेकर उनके पास जाती हैं। इनमें संतान न होना, सास ससुर या पति द्वारा बाँझ कहकर प्रताड़ित किया जाना, पति का अन्य किसी स्त्री पर आसक्त होना, बच्चों का पढ़ने में मन न लगना, घर मे ंठीक ठाक कमाई न होना जैसे कारण प्रमुख होते हैं।

पाखंडी बाबा शोषण का मनोविज्ञान भलीभांति जानते हैं और ऐसी स्त्रियों का आर्थिक व दैहिक शोषण करते हैं।

हम अक्सर देखते हैं कि ऐसे पाखंडी बाबाओं के आश्रम में या डेरे पर नब्बे प्रतिशत स्त्रियाँ ही जाती हैं। स्त्रियाँ भावुक और संवेदनशील होती हैं। यह पाखंडी बाबा जानते हैं कि उन्हें जीवन दर्शन की अबूझ बातों, पुराणों में लिखे किस्सों, धर्म के आलंबन में पितृसत्ता द्वारा स्त्री के लिए बनाये गए पति की सेवा करने जैसे नियमों और धार्मिक ग्रंथों में दिए गए दृष्टान्तों के आधार पर बहलाया जा सकता है।

पुरुष वर्ग इस कारण को नहीं देखता और स्त्रियों की कोई गलती ना होते हुए भी स्त्रियों को न केवल अन्धविश्वासी बल्कि अपराधी मान लेता है।

-स्त्रियों को अन्धविश्वासी मान लेने के पीछे उनका नजर लगने पर नजर उतारना, झाड़ फूंक करवाना जैसे कामों में विश्वास करना भी होता है। प्रत्येक घर में बच्चों की बीमारी संबंधी छोटी मोटी समस्याएँ होती ही हैं जिनमें बच्चे को बुखार आना, सर्दी जुकाम होना, दस्त लगना जैसी बीमारियाँ शामिल हैं।

घर के पुरुष अपनी रोजी रोटी में इतने व्यस्त रहते हैं

कि उन्हें इस बात की चिंता ही नहीं रहती कि उनके बच्चे ठीक हैं या बीमार हैं। ऐसी स्थिति में माताएं ही उनका इलाज करवाती हैं। अब देश में न पर्याप्त अस्पताल हैं न स्वास्थ्य सुविधाएँ हैं फिर उनके लिए पैसा भी लगता है, अत: ऐसी स्थिति में महिलाएं अपने सामान्य ज्ञान के अनुसार उनकी नजर उतरवाना, झाड़ फूंक करवाना जैसे कार्य करती हैं। इसके लिए मोहल्ले में ही नीम हकीम, बैंगा बाबा जैसे लोग पैकेज के साथ उपलब्ध रहते हैं। पूर्व की अंधविश्वास से ग्रस्त वरिष्ठ पीढ़ी इन कामों में उनकी मदद करती है।

यदि घर के पुरुष उचित वैज्ञानिक समझ के साथ अपने बच्चों और परिवार जनों की चिकित्सा की ओर ध्यान दें तो इस समस्या से बचा जा सकता है, लेकिन वे इस काम में उनकी कोई मदद नहीं करते बल्कि बच्चों की तबीयत और बिगड़ने या नुकसान होने पर उसका दोष स्त्रियों पर ही डाल देते हैं। ऐसी माताओं को अन्धविश्वासी करार दे दिया जाता है। स्त्रियाँ भी विवशता और बच्चों के मोह में इस आरोप को सहन कर लेती हैं।

स्त्रियों को केवल इस दोषारोपण से ही नहीं गुज़रना पड़ता कि वे स्वयं अन्धविश्वासी हैं और उन्होंने अपने बच्चों में भी अन्धविश्वास के बीज बोये हैं बल्कि वे स्वयं भी अन्धविश्वास का शिकार होती हैं। आज भी अनेक गाँवों में सूखा, बाढ़, भूकंप जैसी आपदा आने, महामारी या बीमारी फैलने, डायरिया, हैजा जैसे रोगों से बच्चों के बीमार होने या अवसाद, सीजोफ्रेनिया या सामूहिक हिस्टीरिया जैसी मनोकायिक बीमारियों से किसी के ग्रस्त होने पर ''यद जादू टोना करती है, इसकी नज़र बुरी है, इसी ने ऐसा किया होगा'' यह कहकर किसी न किसी स्त्री को ही जिम्मेदार ठहराया जाता है।

अभी भी अनेक गांवों में षडयंत्र पूर्वक किसी स्त्री पर ऐसे आरोप लगाकर उसे डायन या टोना करने वाली टोनही करार दिया जाता है। ऐसा कहकर उसे न केवल अपमानित किया जाता है बल्कि निर्वस्त्र कर उसका जुलूस निकाला जाता है, उसके मुंह में मूत्र अथवा विष्ठा प्रविष्ट कराई जाती है।

आपको नहीं लगता कि हम एक ऐसे पिछड़े समाज में रह रहे हैं जहाँ स्त्री का सम्मान तो दूर उसके बारे में ऐसे ग़लत अफवाहें फैलाएँ जाती है? गांवों में, बस्तियों में आज भी किसी आपदा का ज़िम्मेदार किसी स्त्री को क्यों माना जाता है? 'नज़र लगाने' जैसा आरोप तो बिलकुल सामान्य है।'

आज भी यदि बच्चे बीमार होते हैं तो माताएं कहती हैं 'पड़ोस की किसी महिला की नजर लग गई है', अगर घर में कोई सिन्दूर या नींबू पाया जाये या कुछ अनजानी वस्तु दिखे तो उसे किसी पड़ोस की महिला की ही करतूत माना जाता है।

इस धारणा को दूर करने के लिए कि स्त्रियाँ पुरुषों की तुलना में अधिक अन्धविश्वासी होती हैं सामाजिक व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन करना होगा। जब तक स्त्रियों की वैज्ञानिक शिक्षा का समुचित प्रबंध नहीं किया जायेगा तब तक यह संभव नहीं है।

यह अवश्य है कि आजकल गांवों में भी अनेक स्कूल खुल गए हैं और लड़कों से अधिक संख्या में लड़कियाँ शिक्षा ग्रहण कर रही हैं।

लेकिन सत्य तो यह है कि वैज्ञानिक चेतना हेतु केवल अकादमिक शिक्षा पर्याप्त नहीं है।

स्त्रियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करने के लिए उन्हें स्कूली शिक्षा के साथ, मिथक और यथार्थ में अंतर, कहानी और इतिहास में अंतर, चमत्कारों की निरर्थकता, बाबाओं के झूठे किस्सों की वास्तविकता जैसे विषय भी बताने होंगे। उन्हें सामान्य मनोविज्ञान और मनोदैहिक बीमारियों के बारे में जानकारी देनी होगी। उन्हें नए आविष्कारों और उनके वैज्ञानिक आधार के बारे में बताना होगा। उन्हें धर्म के आधार पर नफरत फैलाये जाने के षड्यंत्र के बारे में भी बताना होगा। और यह केवल स्त्रियों के लिए ही नहीं पुरुषों के लिए भी आवश्यक है।

जब तक हम स्त्रियों पर दोषारोपण करना नहीं छोड़ेंगे और अंधविश्वास के मामले में स्त्री पुरुष दोनों को बराबर का भागीदार नहीं मानेंगे तब तक हम इस पुरुषवादी मानसिकता से मुक्त नहीं हो पाएंगे। चाहे हम मंगल ग्रह पर क्यों न पहुँच जाएँ यह देश और समाज पिछड़ा ही रहेगा।

दुर्ग, छत्तीसगढ़
8871665060

लाहौर केस के सदाबहार क्रांतिकारी - डॉक्टर गया प्रसाद

- सुधीर विद्यार्थी

कानपुर से जगदीशपुर गांव का वह सफर हम ने बस और खड़खड़े पर बैठकर पूरा किया। शहीद भगत सिंह के साथी डॉ० गयाप्रसाद की इस बस्ती तक पहुंचने का मार्ग हमें हर पल रोमांच से भर देता रहा। उनके घर के दरवाज़े पर नीम का दरख्त और पीछे चौपालनुमा कुछ हिस्सा। डॉक्टर साहब से भेंट हुई, तो कल्पना के रंगों से उनका मिलान मुश्किल था। ठिगनी और सामान्य-सी कद-काठी। धोती और बनियान लापरवाही से पहने हुए, लेकिन आंखें चश्मे से दूर तक झांक रही थीं। हम कल्पना भी नहीं कर पा रहे थे कि इसी शख्स ने भगत सिंह के साथ एक समय क्रांति के लंबे डग भरते हुए सुदूर अंडमान की लंबी सजा काटी।

उन्होंने डॉक्टरी का पेशा जब शुरू किया, तब वह शादीशुदा थे। क्रांतिकारी दल में शामिल होने के बाद घर आकर पत्नी से कहा कि तुम अपने माथे का सिंदूर पोंछ डालो और मेरे सिर पर हाथ रखकर देश के लिए विदा करो। सुनकर पत्नी रोने-धोने लगी। आखिर उन कठिन क्षणों में वह आजादी के संघर्ष में हिस्सेदारी करने के लिए निकल पड़े। 'हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ' के सदस्य के नाते उनकी सबसे बड़ी उपयोगिता यह थी कि बाहर डॉ० बी एस निगम के नाम से डॉक्टर की दुकान होती और भीतर क्रांतिकारियों के केंद्र में बम बनाने का कारखाना। वह आर्य समाज और गांधी के सत्याग्रह से भी जुड़े, लेकिन चौरी-चौरा की घटना के बाद वहां से उनका मन उचट गया और वह मजदूर सभा में आए। हरिहरनाथ शास्त्री और गणेशशंकर विद्यार्थी से उनकी भेंट हुई। वह मुनेश्वर अवस्थी से भी मिले, जो उन दिनों गोरखपुर से ''स्वदेश'' का संपादन करने के साथ ही क्रांतिकारी दल से संबद्ध थे।

क्रांति के मार्ग पर चलते हुए उनकी मुलाकात विजयकुमार सिन्हा, शिव वर्मा, सुरेंद्र पांडेय, जयदेव कपूर, भगत सिंह और चंद्रशेखर आजाद से हुई, जो समाजवाद के प्रति गहरे तक समर्पित थे। आजाद से वह पहली बार झांसी में मिले। जाजमऊ के पास होने वाली बैठक के लिए उन्हें आजाद को झांसी लाने की जिम्मेदारी सौंपी गई थी। क्रांतिकारी भगवानदास माहौर से भी वहीं के एक पुस्तकालय में आमना-सामना हो गया। दल के नेता योगेश चंद्र चटर्जी को जेल से छुड़ाने की कोशिशों में वह एक बार पुलिस के हाथों में आने से बाल-बाल बचे। बाद में वह फिरोजपुर जाकर छिपे तौर पर डॉक्टरी की प्रैक्टिस करने लगे। वहां उनके साथ दल का सदस्य जयगोपाल भी था, जो बाद में मुखबिर बना।

भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त द्वारा दिल्ली की केंद्रीय असेंबली में बम फेंके जाने से पहले आगरा क्रांतिकारियों का केंद्र बन गया था। वहां हींग की मंडी में बम बनाने का कारखाना स्थापित किया गया। भगत सिंह के बुलावे पर बंगाल से यतींद्र नाथ दास ने आकर बम बनाने की कला सिखाई। आगरा में गयाप्रसाद को यह काम सौंपा गया कि वह सहारनपुर जाकर किराये पर मकान लेकर इस तरह रहें कि किसी को शक न हो। बाहर होम्योपैथिक दवाखाना और भीतर पार्टी का काम। बाद में लाहौर षड्यंत्र मामले में इसी केंद्र पर जयदेव कपूर, शिव वर्मा और डॉक्टर साहब गिरफ्तार कर लिए गए। लाहौर में सुखदेव पहले ही पकड़े जा चुके थे। लाहौर मुकदमे में अभियोग पक्ष एक भी ऐसा सबूत पेश नहीं कर सका कि गयाप्रसाद किसी सशस्त्र कार्रवाई में लिप्त थे। पर वह जिस दल के सदस्य थे, उसने हुकूमत के खिलाफ युद्ध का ऐलान किया था और वह एक बम फैक्टरी के भीतर गिरफ्तार हुए थे। उन्हें सजा दिलाने के लिए यह पर्याप्त था।

जेल में क्रांतिकारियों की तीन **... शेष पृष्ठ 24 पर**

अंधविश्वास

बलराज सिंह सिद्धु

अंधविश्वास ने हमारे समाज को बुरी तरह जकड़ रखा है। बहुत कम लोग ऐसे हैं जो बिल्कुल अंधविश्वासी नहीं है। अगर एक बार किसी के मन में कोई शंका पैदा हो गई तो निकल नहीं सकती। बचपन में ही बच्चों को सिखाया जाता है कि चाहे कितना भी जरूरी काम हो, पीछे से आवाज़ देने पर, छींक आने पर या काली बिल्ली रास्ता काट जाए तो रुक जाना है, बल्कि घर वापिस आ जाना है। कई लोग इस वजह से जरूरी कार्यों से लेट हो जाते हैं। बच्चे परीक्षा में समय पर नहीं पहुंचते और कई नौकरी के लिए साक्षात्कार देने से वंचित हो जाते हैं।

इसके अलावा और भी प्रचलित अंधविश्वास हैं जैसे रात को नाखून नहीं काटने, बिल्ली आंख वाला आदमी और मूंछ वाली औरत अशुभ होते है, शनि देवता को शनिवार को तेल चढ़ाना, मंगलवार और वीरवार को बाल नहीं कटवाना, बुरी नज़र से बचने के लिए दुकान या घर के प्रवेश द्वार पर मिर्च और नींबू लटकाना और लाखों रुपये की नई गाड़ी के आगे टूटा पुराना जूता लटकाना।

जैसे-जैसे समाज व्यवस्था जटिल होती जा रही है, वैसे वैसे वहम-भ्रम बढ़ते जा रहे है। रविवार को कई समाचारपत्रों के तीन-चार पन्ने पाखंडी तांत्रिकों के विज्ञापनों से भरे होते है। इन विज्ञापनों में सिर्फ फोन करने पर ही दुश्मन को नष्ट करने और पत्नी पति के पैरों में लेटाने की गारंटी दी जाती हैं, तांत्रिक चाहे रोज खुद पत्नी से जूते खाता हो। गड़े हुए खजाने गारंटी से खुदवाए जाते हैं। कोई पूछे, तुम खुद ही खोदकर अमीर क्यों नहीं हो जाते ? ऐसे विज्ञापन भारत में ही नहीं, इंग्लैंड, अमेरिका, कैनेडा के अखबारों में भी धड़ल्ले से छपते हैं। असल में वे कहते हैं कि जो लाहौर बुद्ध, वो पिशौर भी बुद्ध, विदेश चले जाने से अक्ल थोड़े ही आ जाती है।

जब कोई व्यक्ति तरक्की करके अच्छी स्थिति में पहुंच जाता है तो उसे यहीं डर सताता रहता है कि कहीं मैं उसी हालत में न पहुंच जाऊं, जहां से तरक्की का सफर शुरू किया था। इसलिए वह हमेशा किस्मत चमकाने के चक्कर में रहता है। हमें बचपन से ही यह सिखाया जाता है कि सब कुछ किस्मत के हाथ है, मतलब मेहनत की कोई कीमत ही नहीं है। वास्तव में इस विश्वास का कारण हमारे धार्मिक ग्रंथ हैं जो इस बात की गवाही देते हैं कि भगवान की मर्जी के बगैर पत्ता भी नहीं हिलता। ज्यादातर राजनीतिज्ञ, अफसर और अमीर लोग किसी न किसी ज्योतिषी-तांत्रिक को अपना गुरू मानते हैं और उससे पूछे बगैर छोटे से छोटा काम भी नहीं करते ? अच्छे भले नेता किसी ज्योतिषी के कहने पर पूरे परिवार को नगों वाली अंगूठियां पहनाए रखते हैं। चुनावों के समय किसी ज्योतिषी के तय किए शुभ मुहूर्त पर ही नामांकन पत्र दाखिल किए जाते हैं। दक्षिण भारत में एक मुख्यमंत्री तो बुरा वक्त टालने के लिए किसी ज्योतिषी के कहने पर फर्श पर नंगा सोया करता था और एक केंद्रीय मंत्री घोटाले में पकड़े जाने पर बकरी की पूजा करते हुए लोगों ने टीवी पर देखा था। पर यह बात अलग है कि न नीचे नंगा सोना काम आया और न बकरी, दोनों को गद्दी छोड़नी पड़ी।

कई बार अंधविश्वास बड़ी हास्यास्पद स्थिति में फंसा देते हैं। 2002 के चुनावों में पंजाब की एक राष्ट्रीय पार्टी के नेतागण टिकटें लेने के लिए दिल्ली डेरा जमाए बैठे थे। जब पार्टी ने उम्मीदवार घोषित करने में काफी देर कर दी तो नेताओं ने ज्योतिषियों के चक्कर लगाने शुरू कर दिए। पार्टी के एक वरिष्ठ नेता (जिसने बाद में कई पार्टियां बदलीं और काफी बड़बोला है) को एक ज्योतिषी ने सलाह दी कि अगर रात्रि 12 बजे किसी पीपल की जड़ की में 9 नारियल दबाए जाएं तो टिकिट मिल सकता है। अब दिल्ली जैसे शहर में पीपल कहां मिले ? उसके चापलूसों ने शहर की एक कालोनी में पीपल ढूंढ लिया। जब रात को कस्सियां-बेलचे चलने लगे तो शोर सुनकर कालोनी निवासी बाहर आ गए और उन्हें बम दबाते आंतकवादी समझकर पुलिस को बुला लिया। बड़ी मुश्किल से पुलिस की मिन्नतें करके और राजनीतिक भविष्य का वास्ता देकर नारियल दबाए गए।

हैरानी की बात है कि पढ़े-लिखे लोग भी इन चक्करों

में उलझे हुए है। कई संभ्रांत लोग बड़ी सिफारिरश से जेल और थाने से रोटी मंगवाकर खाते है। ज्योतिषियों ने उन्हें बताया होता है कि उनकी किस्मत में जेल की रोटी लिखी है, चाहे अंदर जाकर खा लें, चाहे बाहर से ही खाकर अपना कोटा समाप्त कर लें।

वैज्ञानिक, जिनका आधार ही तर्क है, वे भी इससे अछूते नहीं है। अभी कुछ वर्ष पहलें पी.जी.आई चंडीगढ़ में एक प्रसिद्ध ज्योतिषी (जिसका बेटा बॉलिबुड अभिनेता है) को भाषण देने के लिए बुलाया था। उस समय बहुत हो-हल्ला हुआ। जब अपने वक्तव्य में वह ज्योतिषी, ज्योतिष को गणित आधारित विज्ञान साबित कर रहा था तो कुछ तर्कशील डॉक्टरों ने उससे सवाल पूछना शुरू कर दिया। जब उससे यह पूछा गया कि बताएं कि फलां मरीज को क्या बीमारी है? तो उसे मानना पड़ा कि यह बताना नामुमकिन है। उसे यह भी मानना पड़ा कि नगों से सिर्फ मन को शांति मिलती है, फायदा कोई नहीं होता। जब डॉक्टरों ने कुछ विद्यार्थी पेश करके पूछा कि बताएं कि कौन किस रोग का विशेषज्ञ बनेगा तो उसे लेक्चर बीच में छोड़कर भागना पड़ा।

कुछ वर्ष पहले टोरांटो (मालटन) कैनेडा के रेडियो और अख़बारों में यह खबर प्रमुखता से प्रसारित हुई थी कि एक पंजाबी औरत सुबह चार बजे किसी तांत्रिक के कहने पर चौराहे पर नहा रही थी। गोरे पड़ोसियों ने पुलिस को बुला लिया। गोरे पुलिस वाले बड़े हैरान हुए कि क्या उसके घर बाथरूम नहीं है जो यह सड़क पर नहा रही है ? पुलिस में एक पंजाबी अधिकारी था। उसने औरत से पता करके गोरों को बताया कि यह औरत पुत्र प्राप्ति के लिए किसी तांत्रिक के कहने पर टोना-टोटका कर रही है। इस बात को स्थानीय इंग्लिश मीडिया ने काफी जोर-शोर से उठाया था और इससे पंजाबी समुदाय को नीचा देखना पड़ा था।

इस अंधविश्वास से अनेक ठग करोड़ों का फायदा उठा रहे हैं। इस पर लाखों लोगों का रोजगार चल रहा है। अख़बार और पत्रिकाएं तांत्रिकों के विज्ञापन छापकर लाखों रुपये कमा रही हैं। नग बेचने वाले, ज्योतिषि, तांत्रिक, शनि के नाम पर तेल मांगने वाले, किस्मत बदलने के यंत्र बेचने वाले, अनेकों लोग हैं जो अंधविश्वास से अपना धंधा चला रहे हैं। जब तक लोगों के दिमाग में तर्क और ज्ञान का दीपक नहीं जलता, तब तक यह अंधविश्वास नहीं मिट सकता।

अनुवाद - मुलख सिंह

... पृष्ठ 22 का शेष श्रेणियां थी। पहली पंक्ति उनकी थी, जिनका केस वकीलों को लड़ना था। इसमें देशराज, प्रेमदत्त, मास्टर आज्ञाराम, अजय घोष और पं. किशोरीलाल थे। दूसरी श्रेणी शत्रु की अदालत को मान्यता न देने वालों की थी, जिसमें डॉ० गयाप्रसाद, महावीर सिंह, बटुकेश्वर दत्त, कुंदनलाल और जितेंद्रलाल सान्याल, तथा तीसरी श्रेणी में अपना केस खुद लड़ने वाले भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव, शिव वर्मा, जयदेव कपूर, विजय कुमार सिन्हा, कमलनाथ तिवारी और सुरेंद्र पांडेय को रखा गया। गयाप्रसाद राजनीतिक वाद-विवाद में सम्मिलित होते रहे और मार खाने वाले साथियों की सूची में उनका नाम सबसे ऊपर होता था।

गयाप्रसाद जी को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। उन्हें पंजाब की जेलों में रखने के बाद महावीर सिंह के साथ बेलारी सेंट्रल जेल भेज दिया गया। वहां सत्याग्रहियों के साथ हो रहे उत्पीड़न के विरुद्ध साथ देने के लिए उन्हें कड़ी सजा मिली। जनवरी, 1933 में वह अंडमान भेज दिए गए, जहां उन्होंने 1937 की प्रसिद्ध भूख हड़ताल में हिस्सा लिया। बीमार होने पर उन्हें बलरामपुर और सुल्तानपुर की जेलों में लाया गया। उनकी रिहाई 21 फरवरी, 1946 को हुई। आजादी मिलने पर भी उन्होंने चंद्रशेखर आजाद और भगत सिंह के समाजवादी सपने को पूरा करने के संघर्ष को विस्मृत नहीं किया। मुझे याद है कि पहली मुलाकात में ही उन्होंने मुझसे कहा था, 'हम गुलामी को सिर्फ भारत से ही नहीं, बल्कि सारी दुनिया से मिटा देना चाहते थे। हम तत्कालीन व्यवस्था को सिर्फ इसलिए खत्म करना चाहते थे क्योंकि उसका आधार हिंसा थी।'

इसके बाद डॉक्टर साहब हरदोई के एक जलसे में मिले, जहां चंद्रशेखर आजाद की प्रतिमा का अनावरण करने कैप्टन डॉ० लक्ष्मी सहगल आई थीं। तब उनके दोनों पैरों में सूजन थी। फिर कानपुर के एक विवाह समारोह में उनसे भेंट हुई। 10 फरवरी, 1993 को उनके निधन का समाचार मिला, तो उनके घर में बिताए पल आंखों के सामने जीवंत हो उठे। वह सही अर्थों में सदाबहार क्रांतिकारी थे। **- 97608 75491**

ईश्वर के बारे में

- पेरियार ई.वी. रामासामी

ईश्वर से सम्बन्धित इस आलेख का उद्देश्य है-यह पता लगाना कि क्या ईश्वर को लेकर मनुष्य का व्यवहार और उसका रुख सही अथवा आवश्यक है ?

इस आलेख का पहला लक्ष्य: क्या लोगों के लिए यह आवश्यक है कि वे दूसरों से भगवान को बचाने को कहें, उनको ईश्वर के बारे में बताएँ कि वह एक या अनेक है और इसका प्रचार-प्रसार करें ?

दूसरा लक्ष्य : ईश्वर सम्बन्धी विचार लोगों के दिलोदिमाग से गायब हो रहे हैं। क्या पादरियों और गुरुओं को नियुक्त करना और ईश्वर के प्रचार के लिए, उसके अस्तित्व के प्रचार के लिए उनको धन देना जरूरी है ?

इतना ही नहीं, कई नास्तिक भी सामने आए हैं और ईश्वर का अस्तित्व न होने सम्बन्धी उनके प्रचार ने ईश्वर के अनुयायियों की संख्या कम की है। ऐसे में अनेक आस्तिकों ने आगे बढ़कर ईश्वर के प्रचार का मोर्चा सँभाल लिया है। क्या ऐसा करना आवश्यक है?

क्या ईश्वर को खाने, आभूषणों, कपड़ों, साज-सज्जा, विवाह, त्योहार और शोभा-यात्रा की आवश्यकता होनी चाहिए?

इसके अलावा भी क्या ऐसे मानक हैं, जिनके आधार पर ईश्वर के कामों और उसकी शक्ति को आँका जा सकता है? या फिर क्या वह दुनिया में सर्वशक्तिमान और सारी चीजों के लिए उत्तरदायी है?

क्या उसकी शक्तियों और कार्यों की कोई सीमा है?

क्या कोई व्यक्ति है, जिसे ईश्वर की क्षमताओं और उसकी शक्तियों के बारे में पता हो और वह ईश्वर को बचाने की चिन्ता कर सकता है ?

अगर कोई अपने मन की गहराइयों से यह विश्वास करता है कि एक सर्वशक्तिमान ईश्वर है और इसकी जानकारी के बिना कुछ भी नहीं हो सकता है, तो क्या वह ईश्वर को बचाने का प्रयास करेगा ? अगर कोई यह कहता हो कि दुनिया में कोई ईश्वर नहीं है, तो क्या वह उससे नाराज होगा ?

तमाम ऐसे लोग हैं, जो ईश्वर को लेकर चिन्तित रहते हैं, उसके बारे में प्रचार करते हैं। क्या आप उनमें से ऐसे किसी व्यक्ति के पाले पड़े हैं, जो ईश्वर के आदेशों का पालन करता हो, सारे काम ईश्वर से भयभीत होकर करता हो ? क्या लोग ईश्वर से भय, उसमें आस्था और उसके प्रति आदर प्रदर्शित करते हैं?

अगर कोई व्यक्ति ईश्वर में विश्वास रखता है, तो क्या उसे ईश्वर की प्रार्थना करनी चाहिए और उसकी उपासना करनी चाहिए ?

अगर किसी व्यक्ति को ईश्वर की उपासना और उसकी पूजा करनी भी हो, तो क्या इसका कोई निश्चित समय, स्थान, स्वरूप और इसके तय वाक्य या गीत होने चाहिए ?

इसके अलावा क्या ईश्वर को भौतिक वस्तुएँ दी जानी चाहिए ? अगर वाकई भगवान है और लोगों की उसमें आस्था है, तो क्या अलग-अलग धर्मों के लोगों का अलग-अलग व्यवहार अपेक्षित है ?

इन प्रश्नों को परे रखकर देखें, तो जो लोग अपने आपको महान विद्वान मानते हैं, जिनको लगता है कि वे सर्वज्ञ हैं, उनके लिए ईश्वर का अस्तित्व है या नहीं यह एक अलग प्रश्न है। 'केवल यदि आप लोगों को यह यकीन दिलाते हैं कि एक सर्वशक्तिमान ईश्वर है, तभी लोग ईमानदारी से जिएँगे। उस भय को समाप्त नहीं किया जाना चाहिए।'

अब जरा इस पर चिन्तन करते हैं। ईश्वर के बारे में किए जाने वाले विचार, उसके गुण, उसके निर्णयात्मक कार्य, बेहद खतरनाक प्रतिकार, मसलन- नर्क, अगले जन्म में होने वाले कष्ट जैसे दंड या फिर किसी तरह

की आजादी की खुशी, उच्च वर्ण में जन्म या पिछले जन्म में किए गए अच्छे कामों की बदौलत नए जन्म में असंख्य सुविधाएँ- ईश्वर इन तमाम लाभों की गारंटी भी देता है। निहायत बुद्धिमत्ता के साथ रचे गए, शास्त्र आदि का काल्पनिक और रचनात्मक लेखन आदि इन सभी को हजारों साल पहले हमारे मस्तिष्क में भर दिया गया। आज भी बहुत बड़ी संख्या में लोग, बल्कि लगभग सभी लोग ईमानदारी से नहीं जीते हैं। वे बिना दूसरों का शोषण किए या बिना उन पर नियंत्रण किए नहीं रहते। एक सामान्य मनुष्य से बेहतर जीवनानन्द नहीं ले पाते। अगर इन बातों का विश्लेषण किया जाए कि ऐसा क्यों होता है या फिर भगवान के भय की भावना के कारण लोगों को कोई लाभ नहीं होता है, तो यह तर्क भी अपनी वैधता और प्रभाव खो देता है कि एक मनुष्य के समुचित आचरण के लिए ईश्वर की अवधारणा का होना आवश्यक है।

चूँकि हम पाते हैं कि गरीब, अशिक्षित, कम बुद्धिमत्तापूर्ण व्यवहार करने वाले लोग बिना समुचित आचरण, ईमानदारी और सच्चाई के व्यवहार करते हैं। लेकिन, बहुत शिक्षित, अमीर और उच्च पदों पर आसीन लोग, बड़े श्रद्धालु, धार्मिक नेता भी बिना किसी अपवाद के ऐसा ही आचरण करते हैं। ऐसे में कहा जा सकता है कि ईश्वर में आस्था और उच्च आचरण तथा सदाचार का कोई सम्बन्ध नहीं है। अगर हम यह पूछते हैं कि ईश्वर को एक रूप देना क्यों आवश्यक है? तो हमसे कहा जाता है-'अज्ञानी, मूर्ख आम लोग ईश्वर के स्वरूप की अवधारणा को नहीं समझ सकते। इसी प्रकार ईश्वर को विभिन्न रूपों में दिखाया जाता है, ताकि लोगों के मन में भय और दासता की भावना बरकरार रहे। ईश्वर में कई खतरनाक गुण डाले जाते हैं और ईश्वर हमेशा उच्च वर्ण का होता है। चतुर लोग ईश्वर को ऐसे स्वरूप प्रदान करते हैं। अगर हम इस व्याख्या के बारे में विचार करें, तो इसकी गैर-उपयोगिता, अज्ञानता और इससे जुड़े षड्यंत्र एकदम आराम से स्पष्ट हो जाएँगे। आमतौर पर ईश्वर को एक रूप देने की अवधि 2,000 से 3,000 वर्ष पूर्व मानी जाती है। यही वह दौर था, जब हमारे देश में ईश्वर की उपासना का क्रम शुरू हुआ।

तीन-चार हजार साल से ईश्वर को तमाम रूप दिए गए और लोग अब भी इस विचार में आस्था रखते हैं। न केवल अनभिज्ञ सामान्य लोग, बल्कि पढ़े-लिखे विद्वान और संतों के बीच भी ईश्वर को लेकर सच्चीश्रद्धा गैर-मौजूद नजर आती है। उनके कामों और उनके तर्क में ईश्वरीय झलक नजर नहीं आती। यह बात साफतौर पर उस मिथक को समाप्त कर देती है कि ईश्वर के नाना रूपों का निर्माण उसमें आस्था पैदा करने के लिए किया गया था व इसके तमाम लाभ हैं।

यदि सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान ईश्वर कहीं है भी, तो लोगों को इस बात पर विचार ही क्यों करना चाहिए कि ईश्वर है भी या नहीं? कुछ लोगों को ऐसा क्यों लगता है कि कोई ईश्वर नहीं है? वे उसकी मौजूदगी पर सन्देह क्यों करते हैं? अगर यह मान भी लिया जाए कि कुछ अज्ञानी लोगों के मन में इस तरह के विचार आते हैं तो समझदार लोगों को ईश्वर को बचाने और आस्तिकता का प्रचार करने की आवश्यकता क्यों महसूस होती है? उनको अपने बच्चों और स्कूलों में विद्यार्थियों को यह क्यों सिखाना पड़ता है कि ईश्वर है?

इसके अलावा आखिर भगवान के अवतार के विचार की क्या आवश्यकता पड़ी? कुछ लोगों के बारे में कहा जाता है कि उनमें ईश्वरीय गुण विद्यमान हैं। ईश्वर को सूअर, मनुष्य और यहाँ तक कि कई भद्दे रूपों में चित्रित किया गया है, आखिर क्यों? ईश्वर को बच्चों, सन्देशवाहकों आदि की क्या जरूरत? उसे शब्दों के जरिए सन्देश जारी करने की क्या आवश्यकता? वह लोगों के जरिए बात क्यों करता है? (शरीर को हिलाने और लोगों को अमुक-तमुक काम करने के निर्देश)।

ये काम सही हैं या गलत? इसकी पुष्टि नहीं होती, न ही ईश्वर के अस्तित्व की। इस बारे में गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिए कि क्या लोगों के लिए ईश्वर के अस्तित्व की कोई उपयोगिता है या फिर क्या समाज कल्याण अथवा लोक व्यवहार की बेहतरी में उसकी कोई भूमिका है।

अब तक चाहे जो भी हुआ हो, परन्तु अब यह आवश्यक है कि मनुष्य एक ऐसा **... शेष पृष्ठ 31 पर**

अनावश्यक वस्तुओं की जमाखोरी - एक मानसिक रोग

- हरजीत अटवाल

कई लोगों को अनावश्यक वस्तुओं को जमा करने की आदत होती है, यह वास्तव में एक बीमारी है, एक मस्तिष्क रोग है। इसे जमाखोरी विकार (Hoarding Disorder) कहा जाता है। आप अपने दैनिक जीवन में अक्सर ऐसे लोगों से मिलते हैं। बहुत समय पहले हमारे एक अंग्रेज़ पड़ोसी डेव का घर पुराने फर्नीचर से भरा हुआ था, घर में एक ही जगह बची थी सोने के लिए, नहीं तो हर जगह कुछ न कुछ पड़ा होता। वह हर सप्ताह सेकेंड-हैंड फर्नीचर खरीदता था। मैनें उसके बारे में एक कहानी भी लिखी थी। इसी तरह, मेरे एक अन्य मित्र पीटर के फ्लैट में अखबार और पत्रिकाएँ भरी पड़ी थीं। उसने जो भी अखबार या पत्रिका खरीदी, उसे पढ़ा और एक तरफ रख दिया, उसने उसे फेंका नहीं। जब मैं उनके घर जाता था तो अनावश्यक पडी वस्तुएं बुरी लगती थीं, लेकिन मैनें कभी नहीं सोचा था कि यह कोई मानसिक बीमारी है। मैं शायद अभी भी यह जान नहीं पाता अगर मुझे भी इस मानसिक बीमारी से ग्रस्त ना कहा जाता।

मुझे चाबियां जमा करने की सनक है। मेरे पहले घर, मेरी पहली कार से लेकर उन सभी घरों तक, जिनमें मैं रहा हूं या बिजनेस कॉम्पलेक्स इस्तेमाल किए है, मेरे पास जितनी भी कारें और वैन हैं, सब की एक-एक चाबी मेरे पास है। ऐसा क्यों है? यह मुझे भी नहीं पता। पिछले चार दशकों में, एक दराज चाबियों से भर गया है। एक दिन, कुछ खोजते हुए, मेरे बेटे ने उस दराज को खोल लिया और जाहिर है, मुझ पर जमाखोरी विकार (Hoarding Disorder) का आरोप लग गया। मेरी बेटी, जो इंग्लैंड में राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा में काम करती है, ने मुझ पर कुछ परीक्षण शुरू किए। मैंने भी इसके बारे में बहुत शोध किया, तब पता चला कि यह वास्तव में एक मानसिक बीमारी है, एक गंभीर बीमारी है।

होर्डिंग डिस्आर्डर (जमाखोरी-विकार) को कंपल्सिव-होर्डिंग अर्थात आवेगी-जमाखोरी के रूप में भी जाना जाता है यानी कि ऐसी जमाखोरी जो आप किसी आवेग में आकर करते हो, जिसकी कोई जरूरत नहीं होती, न ही वह कभी काम आएगी। ऐसे लोग वस्तुओं को जमा करते-करते अपने घर का हर कोना भर देते है, वे अनावश्यक चीजें भी नहीं फेंकते हैं और डेव के घर की तरह सोने के लिए भी मुश्किल से ही जगह बचती है। उनके ऐसा करने के अलग-अलग कारण हो सकते हैं। वे सोच सकते है कि एक दिन वे काम आएगी, या वस्तुओं से उन्हें मोह हो जाता है, उन्हें इन्हें फेंकने में परेशानी होती है, या वे यह तय नहीं कर पाते कि इसे फेंकना है या नहीं, या बस इसे फेंकना ही नहीं चाहते है। और भी कारण हो सकते हैं लेकिन यह साबित हो चुका है कि यह एक मानसिक बीमारी है। यह बीमारी पिछली सदी के अस्सी के दशक में दिखाई देने लगी थी लेकिन इसे पकड़ने या पहचानने या स्थापित करने में समय लगा। 2013 में इसे मानसिक बीमारी घोषित किया गया था। DSM (डायग्नोस्टिक स्टैटिस्टिकल मैनुअल) नामक पत्रिका के पांचवें अंक में इसे एक मानसिक बीमारी माना गया था। अवसाद, तनाव, चिंता, भय, अंधविश्वास आदि इस रोग का कारण हो सकते हैं। ऐसी बेकार चीजों के जमा होने से कई तरह के नुकसान हो सकते हैं। एक जगह की कमी और प्रदूषण के कारण स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। आग का भय बना रहता है। चूहे, कीड़े आदि पैदा हो सकते हैं ऐसे लोग परिचितों द्वारा घृणा के पात्र भी बन जाते हैं।

जमाखोरी-विकार के नजदीक एक अन्य स्थिति को OCD (ओब्सेसड कंपल्सिव डिस्आर्डर) भी कहा जाता है। (जुनून बाध्यकारी विकार) का अर्थ है जुनूनी बाध्यकारी पागलपन। इस बीमारी से ग्रस्त कोई व्यक्ति जब कोई कार्य करने लगता है तो करते ही रहता है। बहुत से लोग अनावश्यक रूप से सफाई करते हैं, कई ब्रश करना शुरू करते हैं तो करते ही रहते हैं या ऐसा ही कुछ। आगे शेष करने से एक स्थिति के साथ कई स्थितियां उत्पन्न होती हैं या उपचार के उद्देश्य से बनाई या बांट ली जाती है। एक मामले में केवल जमाखोरी की जाती है, दूसरे मामले में एक काम बार-बार किए जा रहे काम से जुड़ा सामान जमा किया जाता है।

ऐसे बीमार लोग गैर-जरूरी किताबें भी पत्रिकाओं-समाचार पत्रों के अलावा जमा करते रहते हैं। उनके पास किसी पुस्तक की कई प्रतियाँ भी मिल सकती हैं। बिना

उद्देश्य के पुस्तकें एकत्र करने की बीमारी को बिब्लोमेनियो कहा जाता है। एक अमेरिकी व्यक्ति, स्टीवन ब्लमबर्ग, किताबों की जमाखोरी के मामले में सबसे प्रसिद्ध हुआ है। उसके घर के हर कोने में किताबें थी। उसने कभी यह स्वीकार नहीं किया कि वह इस बीमारी का शिकार था या वह कुछ फिजूल काम कर रहा था, बल्कि उसने तर्क दिया कि उसने उन पुस्तकों को आश्रय दिया जिनकी पुस्तकालयों ने उपेक्षा की थी। अमेरिका के एक और गुस्ताव हेस्फोर्ड के घर में किताबों के ढेर लगे हुए थे। उस पर पुस्तकालयों से किताबें चुराने के कई मामले दर्ज थे। (पुस्तकालय के रूप में घर पर पुस्तकों का संग्रह करना या पाठक के रूप में पढ़ते समय घर पर अच्छी रचनात्मक पुस्तकें रखना एक रचनात्मक कार्य है। यहां उन लोगों का उल्लेख किया गया है जो बिना किसी उद्देश्य के संग्रह करते हैं, न कि किसी अध्ययन रूचि के लिए। – संपादक)

एक अन्य प्रकार की जमाखोरी जो खतरनाक हो सकती है वह है पालतू जानवरों की जमाखोरी (एनीमल होर्डिंग)। बहुत से लोग घर की क्षमता से अधिक जानवर रखते हैं, कुत्ते, बिल्ली, खरगोश, हैम्सटर आदि। उन्हें जानवरों से इतना लगाव हो जाता है कि वे उन्हें जाने नहीं दे सकते। चूंकि अन्य प्रकार के जमाखोरी अवैध नहीं है, सरकार ज्यादा हस्तक्षेप नहीं करती है, लेकिन सभी प्रकार के जानवरों की जमाखोरी की अनुमति नहीं है। पशु कल्याण विभाग ऐसे लोगों को आसानी से कोर्ट तक ले जा सकता है।

कुछ पश्चिमी देशों में जानवरों की जमाखोरी के खिलाफ जमाखोरी-निवारण दल बनाया गया है। वैसे जानवरों की जमाखोरी के पीछे मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि ऐसे लोगों को बचपन में प्यार नहीं मिलता, जानवरों की जमाखोरी को लेकर युट्यूब पर कई दिल दहला देने वाले वीडियो मौजूद हैं। वैसे जमाखोरों के बारे में पढ़ने को तो बहुत कुछ है, गूगल और यूट्यूब उनके बारे में कहानियों से भरे पड़े हैं, लेकिन जैस्मिन हरमन की कहानी कुछ और ही है। जैस्मिन एक टीवी (प्रेजेंटर) प्रस्तोता है, उनकी मां एक जमाखोर हैं और उन्होंने बी.बी.सी. के लिए एक कार्यक्रम किया है 'माई होर्डर मोम एंड मी' जो देखने लायक है। आप इसे अभी भी युट्टूब (YouTube) पर देख सकते हैं।

ऐसे रोगियों के होर्डिंग्स (जमाखोरी) में विज्ञापन पम्फलेट, समाचार पत्र, पत्रिकाएं, रसोई का कचरा, खराब कपड़े, अनुपयोगी बिस्तर, चारपाईयां, मेज और कुर्सियाँ आदि शामिल हैं। यहाँ मैं जमाखोरी की एक और आदत कबूल करूँगा कि मेरे घर के अटारी या मचान में बहुत सारा सामान है, जिसमें मेरे बच्चों के खिलौने, साइकिल, पुराने कंप्यूटर गेम, मुझे नहीं पता क्या-क्या। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते गए, मैंने उनके खिलौने आदि को मचान मे रख दिया, उसमें पुराने ब्रीफकेस, जैकेट आदि भी होंगे। मुझे लगता है कि एक छोटा ट्रक इस कबाड़ से भर जाएगा। मुझे नहीं पता कि मेरे दोस्त रॉड लॉज के घर पर कितने पुराने टीवी, पुरानी इलेक्ट्रिक मोटर, पुराने डिस्क-टॉप कंप्यूटर और अन्य चीजें पड़ी हैं। यह इलेक्ट्रॉनिक होर्डिंग का एक उदाहरण है। एक और खतरनाक स्थिति यह है कि बीमार व्यक्ति घर में आने वाली कोई भी चीज जैसे खाली बोतल, डिब्बे, पैकेट, फटे कपड़े, यहां तक कि बचा हुआ खाना या रसोई का कचरा भी नहीं फेंकता। ऐसे मरीजों की संख्या अमेरिका में ज्यादा है। यह रोग सामान्य चिकित्सा स्थिति में नहीं आता है अर्थात इसे चोट या शारीरिक रोग नहीं माना जाता है। यह विशुद्ध रूप में दिमाग/मानसिकता से संबंधित है। यह किसी बढ़ी दिमागी बीमारी की प्रथम स्टेज भी हो सकती है। यह रोग ग्यारह से बीस वर्ष की आयु में विकसित होना शुरू हो जाता है। 70% लोगों को यह बीमारी एक साल की उम्र से पहले लग चुकी होती है। चालीस की उम्र के बाद केवल चार प्रतिशत लोगों को ही यह रोग लगता है। जब उसका अपना घर हो और उसे रोकने वाला कोई न हो तो यह बीमारी उसे अपनी चपेट में ले लेती है।

इस बीमारी का कोई सीधा इलाज नहीं है, इसलिए अक्सर अवसाद रोधी दवाएं निर्धारित की जाती हैं। इसका इलाज आमतौर पर सीबीटी (संज्ञानात्मक व्यवहार थेरेपी) नामक परामर्श के माध्यम से किया जाता है। इसमें मरीज को समझाया जाता है कि क्या फेंकना है और क्या रखना है। निर्णय लेने के कौशल का विकास होता है, घर को सजाने और चीजों को व्यवस्थित रखने के तरीके सिखाए जाते हैं। उन्हें सामाजिक अलगाव से बचने के तरीके सिखाए जाते हैं। चिकित्सक अक्सर उनके पास जाते हैं। संयुक्त चिकित्सा भी परिवारों या समूहों में दी जाती है।

वैसे तो ऐसे लोगों को समाज के लिए खतरा नहीं माना जाता है, लेकिन इनमें से 42% लोग परेशानी का कारण बन सकते हैं। उनके 63% दोस्त, रिश्तेदार उन्हें परेशानी मानते हैं।

चाबीयां जमा करने की मेरी आदत **... शेष पृष्ठ 31 पर**

सांप्रदायिक फासीवाद के विरुद्ध युवा पीढ़ी को खड़े होने की जरूरत

- सुमीत सिंह अमृतसर

मैं अधिकतर रेल गाड़ी में यात्रा करने को प्राथमिकता दिया करता हूँ तथा यात्रा के दौरान प्राय: अपने साथ वैज्ञानिक साहित्य एवं कोई अखबार अथवा मैगजीन अवश्य ही रखता हूँ। कुछ सप्ताह पूर्व अमृतसर से मोहाली जाने के लिए रेल गाड़ी द्वारा यात्रा करते समय प्रसिद्ध विद्वान एवं नाटककार शमसुल इस्लाम की पुस्तक ''आर. एस. एस. की मौलिक पहचान'' पढ़ रहा था। ट्रेन को छूटे अभी कुछ समय ही गुजरा था कि सामने वाली सीट पर बैठे हुए किसी कालेज के कुछ विद्यार्थियों, जिनमें से अधिकतर हिन्दू धर्म से संबन्धित थे, में से एक विद्यार्थी ने मुझ से पूछ लिया:

''अंकल, देश में पिछले कुछ समय से धर्म की आड़ में बढ़ रही सांप्रदायिक घृणा एवं सांप्रदायिक हमलों को आप किस प्रकार से देखते हो? क्या हिन्दू राष्ट्र बन जाने से सभी हिन्दू लोगों की समस्त समस्याएं हल हो जाएंगी ?'' शायद उसने मेरे द्वारा पढ़ी जा रही पुस्तक का शीर्षक पढ़ कर ही मुझ से ये सवाल किये थे। मुझे उस के ऐसे गंभीर सवाल सुन कर अत्यंत आश्चर्य हुआ और साथ में इस बात की संतुष्टि भी हुई कि युवा पीढ़ी देश के मौजूदा बुरे आर्थिक एवं सांप्रदायिक हालातों के प्रति चिंतातुर भी दिखाई दे रही है।

मैंने विद्यार्थियों को संबोधित होते हुए कहा, ''बेटा, यह हम सभी के लिए निश्चय ही एक गंभीर चिंता का विषय है। हमारा देश प्रारम्भ से ही भिन्न-भिन्न धर्मों, संप्रदायों, जातियों, भाषाओं एवं संस्कृतियों का देश रहा है तथा इस विभिन्नता के बावजूद हम हमेशा एकजुट रहे हैं। हम सब ने इकट्ठे हो कर बर्तानवी हुकूमत के विरुद्ध आज़ादी की लड़ाई लड़ी है तथा हज़ारों शहीदियां, उम्र कैदों, काले पानी की सजाओं एवं जेलों के कष्ट सहन कर के देश को आजाद करवाया है। परन्तु पिछले कुछ वर्षों से धर्मों की सांप्रदायिक राजनीति करने वाले आर.एस.एस., भाजपा के राजनीतिक एवं सांप्रदायिक संगठनों के द्वारा सत्ता पर काबिज होने तथा इसे लंबे समय तक बरकरार रखने के मकसद से अल्पसंख्यकों, खास तौर पर मुस्लमानों, इसाईयों, दलितों, वामपंथियों एवं आदिवासियों आदि पर इसलिए लगातार जानलेवा सांप्रदायिक हमले किये जा रहे हैं ताकि हिन्दू राष्ट्र की स्थापना के लिये देश में भय एवं दहशत का माहौल पैदा कर के इनको दूसरे दर्जे का नागरिक बना कर रखा जाए। मुसलमानों के घरों एवं दुकानों पर गैरकानूनी ढंग से बुलडोजर चलाने एवं उनके धार्मिक विश्वासों पर पाबंदियां लगाने की कारवाई इसी योजनाबद्ध साजिश का हिस्सा हैं। इतिहास को मिटाने के लिए मुस्लिम नामकरण वाले शहरों, कस्बों, रेलवे स्टेशनों के नाम बदले जा रहे हैं। यह सब भारतीय संविधान की धर्मनिर्पेक्षता की भावना के विपरीत हो रहा है।''

मैंने पानी की बोतल में घूँट भरने के पश्चात् अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए कहा,

''अत्यंत शर्मनाक बात है कि बाबरी मस्जिद को ढहाने के बाद इन सांप्रदायिक संगठनों के हौसले इस हद तक बढ़ गये हैं कि ये लोग हुकूमतों की सरपरस्ती एवं भारतीय पुरातत्व विभाग की मिलीभुगत से बनारस की ज्ञानवापी एवं मथुरा की शाही ईदगाह मस्जिद के अलावा कुतुबमीनार तथा ताजमहल में बलपूर्वक मंदिर के निर्माण करने के मनसूबे बना रहे हैं, जो कि भारतीय संसद द्वारा पारित किये गये 'प्लेसमेंट आफ वर्शिप एक्ट-1991' का सरासर उल्लंघन है। इस एक्ट के अनुसार किसी भी धार्मिक स्थल का 15 अगस्त 1947 को जो भी स्टेटस था, उसे तबदील नहीं किया जा सक्ता। वर्तमान सरकारों द्वारा ऐसे सांप्रदायिक रुझानों को तुरन्त प्रभाव से रोका न गया तो यह हमारे देश की अमन-शान्ति, एकता एवं अखंडता के लिए बेहद घातक हो सकता है।''

वे मेरी बातों के साथ सहमति रखते हुए अत्यन्त एकान्त मन से सुन रहे थे, परन्तु उनके चेहरों पर अपने तथा देश के भविष्य के प्रति चिंता साफ तौर पर झलक रही थी। केबिन में बैठे अन्य यात्री भी इस विचार-चर्चा को दिलचस्पी के साथ सुन रहे थे।

फिर मैंने विद्यार्थियों के दूसरे सवाल को मुखातिब

होते हुए कहा, ''देश के समस्त हिन्दू भाईचारे एवं खास तौर पर नवयुवकों को यह तथ्य समझने की जरूरत है कि जिस हिन्दुत्व की आड़ में कुछ सांप्रदायिक संगठन समस्त हिन्दू भाईचारे को गुमराह कर रहे हैं, उसका हिन्दू धर्म, हिन्दू भाईचारे एवं भारतीय संस्कृति के विकास एवं खुशहाली के साथ कोई दूर का भी वास्ता नहीं है, बल्कि इसके विपरीत हिन्दुत्ववाद देश की कार्पोरेट एवं सांप्रदायिक शक्तियों की ऐसी राजनीतिक विचारधारा है जिसके अमल द्वारा देश में सांप्रदायिक घृणा फैला कर न केवल बंधुत्व एकता, लोकतन्त्र, धर्म-निर्पेक्षता एवं देश को कमज़ोर किया जा रहा है बल्कि देश की आर्थिकता को कार्पोरेट घरानों के हाथों में लुटा कर समूचे मेहनतकश वर्ग तथा खास तौर पर नौजवानों के भविष्य को भी बर्बाद किया जा रहा है।''

मेरे बात करते हुए मेरी पत्नी के चेहरे के हाव-भाव से ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे कि वह किसी अनजाने डर के चलते मुझे यह सब करने से रोकना चाह रही हो, परन्तु मैं विद्यार्थियों के मनों की शंकाओं को दूर करने के मकसद से अपनी बात को जारी रखते हुए कहा,

''हमें यह सवाल वर्तमान शासकों एवं स्वयं अपने आप से भी पूछना पड़ेगा कि हम ने मुस्लमानों के नाम पर एक अलग देश पाकिस्तान बना कर अब तक क्या लाभ कमाया है? उस समय के मुस्लिम लीग के नेताओं ने भी अपना अलग देश ले कर समस्त मुसलमानों को आज़ादी, समानता, सामाजिक न्याय, विकास एवं बेहतर सुरक्षित जीवन देने के सब्जबाग दिखलाए थे। परन्तु धार्मिक कट्टरवाद के उभार के कारण आज तक वह देश अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो सका। भारत के 1947 के रक्तरंजित बटवारे के बावजूद 75 वर्षों के बाद भी यहां पर वास्तविक लोकतन्त्र एवं स्वतंत्रता कायम नहीं हो सकी। वहां पर अप्रत्यक्ष तौर पर अभी भी सेना एवं कट्टरपंथी मौलानाओं का कब्ज़ा है तथा शिया-सुन्नी के सांप्रदायिक दंगा-फसाद एवं बम धमाकों की खूनी घटनाएं आम तौर पर घटित होती ही रहती हैं। क्या हमने हिन्द-पाक के खूनी बटवारे तथा वहां के बुरे हालातों से अभी तक भी कोई सबक नहीं सीखा? हमारे शासक अपने देश में फिर से 1947 जैसे खूनी हालात क्यों पैदा करना चाहते हैं?''

मेरे ऐसे सवालों में विद्यार्थियों के अनेकों सवालों के जवाब छिपे हुए थे, परन्तु मैंने उनके अहम सवाल का जवाब देते हुए अपनी बात को समेटते हुए कहा, ''बेटा, तुम्हें इस तथ्य को समझने की जरूरत है कि केन्द्र सरकार की जन विरोधी साम्राज्यवादी नीतियों के परिणामस्वरूप कार्पोरेट घरानों द्वारा किये जा रहे शोषण के कारण देश में बढ़ रही महंगाई, बेरोजगारी, गरीबी, महंगी शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाएं, अनपढ़ता, भुखमरी, भ्रष्टाचार, आर्थिक एवं सामाजिक असमानता, युवा पीढ़ी का विदेशों को प्रवास इत्यादि गंभीर समस्याओं की घातक मार तो आबादी के अनुपात के अनुसार तो बल्कि बड़ी संख्या वाले हिन्दू भाईचारे को अधिक पड़ रही है। परन्तु कार्पोरेट मीडिया द्वारा इन समस्याओं से उनका ध्यान भटकाने के लिए हिन्दू-मुस्लिम, मंदिर-मस्जिद, गौ मांस, लव जिहाद, हिजाब, लाऊड स्पीकर, बुलडोजर तथा भारत-पाकिस्तान के सांप्रदायिक मुद्दों के द्वारा बहुसंख्यक हिन्दुओं और खास तौर पर नवयुवकों का ध्रुवीकरण करके उनको मुसलमानों के विरुद्ध भड़काया जा रहा है। इसलिये हिन्दू राष्ट्र एवं साम्राज्यवादी नीतियों का एजेंडा अल्पसंख्यकों के बनाए समूचे हिन्दू भाईचारे को ही अधिक हानि पहुंचा रहा है, जिसके लिए उनको सांप्रदायिक संगठनों के विरुद्ध अपनी आवाज बुलंद करने तथा सामुदायिक सहभागिता बना कर रखने की जरूरत है।''

मेरी बात समाप्त हो जाने के पश्चात् एक विद्यार्थी ने समूह विद्यार्थियों की ओर से मेरे विचारों की प्रौढ़ता करते हुए कहा, ''अंकल, इस वर्ष हमारी डिग्री मुकम्मल हो जाएगी परन्तु हमें कोई उचित सरकारी अथवा प्राईवेट नौकरी मिल जाने के कोई आसार नज़र नहीं आ रहे, क्योंकि सरकारों ने विशाल सार्वजनिक संस्थानों का विशाल पैमाने पर निजीकरण करके बेरोजगारी को चरम सीमा पर पहुँचा दिया है। हमें हिन्दू राष्ट्र, धार्मिक स्थलों एवं सांप्रदायिक घृणा की राजनीति की नहीं, बल्कि अपने देश में सस्ती शिक्षा एवं स्वास्थ्य-सुविधाओं, रोजगार के अधिक अवसरों तथा जनपक्षीय शासन-व्यवस्था की अधिक आवश्यकता है, जिस से हम अपने एवं अपने परिवारों के भविष्य को उज्ज्वल एवं सुरक्षित बना सकें। हम यह बात भली प्रकार से समझते हैं कि यदि मुगल राजाओं तथा ब्रिटिश सरकार द्वारा सैंकड़ों वर्ष शासन करने के बावजूद वे भारतवर्ष को इस्लामी अथवा इसाई राज्य में नहीं बदल

सके तो अब स्वतन्त्र भारत में बहुसंख्यक हिन्दुओं अथवा हिन्दू धर्म को किसी भी संप्रदाय से कोई खतरा नहीं हो सकता। वास्तविकता तो यह है कि हमें हिन्दू राष्ट्र के पक्षधर संगठनों की साम्राज्यवादी एवं सांप्रदायिक नीतियों से अधिक खतरा है, जिनका कड़ा विरोध करने के लिए हमें सभी समुदायों, वर्गों, नवयुवकों एवं जनतान्त्रिक शक्तियों को एकजुट हो कर ऐतिहासिक किसान आंदोलन की भांति निर्णायक संघर्ष करना पड़ेगा।''

मुझे विद्यार्थियों के अंदर ऐसी राजनीतिक चेतना तथा जनतान्त्रिक संघर्ष की बेबाक भावना देख कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। फिर मैं उनको धर्म-निर्पेक्षता, अपने जनतान्त्रिक अधिकारों एवं सामुदायिक एकता की रक्षा के लिए आगे आ कर अपनी जिम्मेदारी निभाने का आह्वान देते हुए अपनी पत्नी के साथ मोहाली स्टेशन पर उतर गया।

अमृतसर
76960 30173
हिन्दी अनुवाद- बलवन्त सिंह लेक्चरार

... पृष्ठ 28 का शेष के बारे में सोचते हुए एक और अजीब बात दिमाग में आई। मैंने अपनी चाबियों के गुच्छे की ओर देखा तो दो चाबियां ऐसी थीं, जिनका मुझे नहीं पता कि वे मेरे गुच्छे में क्यों हैं। मैंने इसे कई दोस्तों के साथ सांझा किया। मेरा कोई भी दोस्त जो अपनी चाबियों वाला गुच्छा देखता था, उसमें एक या दो अनावश्यक चाबियां होना तय था। आप भी अपना गुच्छा अवश्य देखना।

एक अन्य प्रकार की जमाखोरी है, विशेष वस्तुएं एकत्रित करना। ऐसे लोगों को संग्राहक कहा जाता है। संग्राहक अन्य उद्देश्यों के लिए चीजें एकत्र करते हैं, कोई पेंटिंग एकत्र करना पसंद कर सकता है, कोई टिकट एकत्र करता है, तो कोई सिक्के। इसे रोग नहीं कहा जा सकता। तो मैं चाबियों का संग्रहकर्ता हूं, उन चाबियों का जिनका मेरे जीवन के साथ संबंध रहा है। इसलिए मेरी स्थिति एक संग्राहक की हो सकती है, जमाखोरी-विकार वाली नहीं। असल में मेरी हालत यह है,

फैंकी न गई मुझसे, अपने घर की वह चाबी,
जिससे तुमने खोला था दरवाजा, पहली और आखिरी बार।

अनुवाद - कृष्ण कायत - 98961-05643, मंडी डबवाली।

... पृष्ठ 26 का शेष जीवन जिए, जिसमें भय और चिन्ता के लिए कोई जगह नहीं हो। उसे एक शान्तिपूर्ण और बेहतर जीवन जीने का अधिकार है। सामाजिक मानकों और नियमों को बनाते वक्त भी इस बात का ध्यान रखा जाए, वरना भविष्य खतरों से भरा होगा।

ऐसा इसलिए, क्योंकि अब लोग जल्दी नहीं मरेंगे। अब तक अगर हमारे लोगों की औसत उम्र 25 साल थी तो अब यह 50 साल हो जाएगी। स्वास्थ्य और चिकित्सा सुविधाएँ बढ़ी हैं। अब तक लोग बीमारियों और समस्याओं को ईश्वर की मर्जी मानते थे और युवावस्था में ही मर जाते थे। लेकिन अब लोगों को खुद पर भरोसा है। वे इन बाधाओं से निकलने की राह तलाश कर रहे हैं जीवन के अनेक क्षेत्रों में लोगों ने तरक्की की है और जीवन सम्भाव्यता बढ़ गई है।

इसी प्रकार आबादी भी बढ़ रही है।गर्भपात, बच्चों की कम उम्र में मौत, प्रसव के दौरान मौत आदि में अब कमी आ रहीहै क्योंकि न केवल स्वास्थ्य सुविधाएँ सुधरी हैं बल्कि सुरक्षित चिकित्सा भी उपलब्ध हो रही है। सन्तानहीनता की समस्या हल करने में भी मदद मिली है। अब विधवाओं को यूँ ही जीवन गुजारने की मजबूरी नहीं है क्योंकि विधवा पुनर्विवाह हो रहे हैं। प्रेम-विवाह की स्वतंत्रता है। इन तमाम बातों की वजह से जन्म दर में बढ़ोतरी हो रही है।

आमतौर पर चिकित्सा और स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार की वजह से लोग अब लम्बे समय तक जीवन जी रहे हैं। उन सबको भोजन, आराम, बढ़िया जीवन चाहिए।

(स्रोत:निबन्ध-रिपब्लिक, कुदी आरसु, 7 मई 1949)
(अंग्रेज़ी से अनुवादः पूजा सिंह)

भारत की सबसे बड़ी कमजोरी उसके अपने ही लोग बने हुए है, जो धर्म और जाति के नाम पर आपस में बंटकर देश का दुखांत लिख रहे है।

- हस्टन स्मिथ

अगर आप दर्द महसूस करते हो तो आप जीवित हैं, अगर दूसरे का दर्द भी महसूस करते हो तो इंसान हो। - लियो टाल्सटाय

चंद्रशेखर आज़ाद : जिन्हें ब्रिटिश पुलिस कभी ज़िंदा नहीं पकड़ सकी

– रेहान फ़ज़ल

बात सन 1925 की है:

आठ डाऊन पैसेंजर गाड़ी के दूसरे दर्जे के डिब्बे में अशफ़ाकउल्ला, शचीद्रनाथ बख़्शी और राजेंद्र लाहिड़ी सवार हुये। उन्हें ये काम सौंपा गया था कि वो निश्चित स्थान पर ज़ंजीर खींच कर ट्रेन खड़ी करवा दें। बाकी सात लोग: राम प्रसाद बिस्मिल, केशव चक्रवर्ती, मुरारी लाल, मुकुन्दी लाल, बनवारी लाल, मन्मथ नाथ गुप्त और चंद्रशेखर आज़ाद उसी ट्रेन के तीसरे दर्जे के डिब्बे में सवार थे। उनमें से कुछ को गार्ड और ड्राइवर को पकड़ने का काम सौंपा गया था जबकि बाकी लोगों को गाड़ी के दोनों ओर पहरा देने और ख़ज़ाना लूटने की ज़िम्मेदारी दी गई थी।

जिस समय गाड़ी की ज़ंजीर खींची गई, तब अँधेरा हो चला था। गार्ड और ड्राइवर को पेट के बल लिटा दिया गया और तिजोरी को ट्रेन से नीचे गिरा दिया गया। तिजोरी काफी वज़नी और मजबूत थी। हथौड़ों और छेनी से उसे तोड़ा जाने लगा, तिजोरी में नकद रुपये बहुत थे। इसलिए उनको गठरी में बाँधा गया और क्रांतिकारियों ने पैदल ही लखनऊ की राह पकड़ी।

शहर में घुसते ही ख़ज़ाना सुरक्षित स्थान पर रख दिया गया। उन लोगों के ठहरने के जो ठिकाने पहले से तय थे, वो वहाँ चले गए, लेकिन चंद्रशेखर आज़ाद ने वो रात एक पार्क में ही बैठकर बिता दी।

सुबह होते ही 'इंडियन टेलीग्राफ़' अखबार बेचने वाला चिल्लाता सुना गया कि **'काकोरी के पास सनसनीखेज डकैती'**। इस ट्रेन डकैती से ब्रिटिश शासन बौखला गया। गुप्तचर विभाग के लोग सजग होकर उन सभी लोगों पर निगरानी रखने लगे जिन पर क्रांतिकारी होने का शक था। 47 दिन बाद यानी 26 सितंबर, 1925 को उत्तर प्रदेश के विभिन्न स्थानों पर छापे मारकर गिरफ्तारियाँ की गईं। इनमें से चार लोगों को फ़ाँसी पर चढ़ा दिया गया, चार को काला पानी में उम्र कैद की सज़ा सुनाई गई और 17 लोगों को लंबी कैद की सज़ा सुनाई गई। सिर्फ चंद्रशेखर आज़ाद और कुंदन लाल ही पुलिस के हाथ नहीं लगे। आज़ाद को ब्रिटिश पुलिस कभी जीवित नहीं पकड़ पाई।

भगत सिंह को गिरफ्तारी से आज़ाद ने बचाया:

आज़ाद के बारे में मशहूर था कि 'उनका निशाना ज़बरदस्त था'। 17 दिसंबर, 1927 को अंग्रेज़ डीएसपी जॉन साउन्डर्स को मारने के बाद जब भगत सिंह और राजगुरु डीएवी कॉलेज के हॉस्टल की ओर भाग रहे थे, तो एक पुलिस हवलदार चानन सिंह उनके पीछे दौड़ रहा था। हॉस्टल से सारा नज़ारा देख रहे चंद्रशेखर आज़ाद को ये अंदाज़ा हो गया था कि भगत सिंह और राजगुरु ने अपनी पिस्तौल साउन्डर्स पर खाली कर दी है और उनके पास गोलियाँ नहीं बची हैं। चंद्रशेखर आज़ाद के साथी रहे शिव वर्मा अपनी किताब 'रेमिनेंसेज़ ऑफ फेलो रिवोल्यूशनरीज़' में लिखते हैं, 'ये ज़िंदगी और मौत की दौड़ थी और दोनों के बीच का फ़ासला धीरे-धीरे कम होता जा रहा था। भागते हुए चानन सिंह की बाहें भगत सिंह को बस पकड़ने ही वाली थीं, लेकिन इससे पहले कि चानन सिंह ऐसा कर पाते एक गोली उनकी जाँघ के पार निकल गई। वो गिर पड़े और बाद में ज्यादा खून निकल जाने से उनकी मौत हो गई। ये गोली अपनी माउज़र पिस्तौल से चंद्रशेखर आज़ाद ने चलाई थी।

शहादत (27 फरवरी 1931)

27 फरवरी, 1931 को आज़ाद इलाहाबाद के एल्फ्रेड पार्क में अपने साथी सुखदेव राज के साथ बैठे बात कर रहे थे कि सामने की सड़क पर एक मोटर आकर रुकी, जिसमें से एक अंग्रेज़ अफ़सर नॉट बावर और दो सिपाही सफेद कपड़ों में नीचे उतरे।

सुखदेव राज लिखते हैं, 'मोटर खड़ी होते ही हम लोगों का माथा ठनका, गोरा अफ़सर हाथ में पिस्तौल लिए सीधा हमारी तरफ आया और पिस्तौल दिखाकर हम लोगों से अंग्रेज़ी में पूछा, 'तुम लोग कौन हो और यहाँ क्या कर रहे हो?' आज़ाद का हाथ अपनी पिस्तौल पर था और मेरा अपनी पिस्तौल पर। हमने उसके सवाल का जवाब गोली चलाकर दिया। मगर गोरे अफ़सर की पिस्तौल

पहले चली और उसकी गोली आज़ाद की जाँघ में लगी, वहीं आज़ाद की गोली गोरे अफ़सर के कंधे में लगी।

दोनों तरफ से दनादन गोलियां चल रही थीं। अफसर ने पीछे दौड़कर मौलश्री के पेड़ की आड़ ली, उसके सिपाही कूद कर नाले में जा छिपे। इधर हम लोगों ने जामुन के पेड़ को आड़ बनाया। एक क्षण के लिए लड़ाई रुक सी गई। तभी आज़ाद ने मुझसे कहा मेरी जाँघ में गोली लग गई है। तुम यहाँ से निकल जाओ।

पिस्तौल दिखाकर साइकिल छीनी :

सुखदेव राज आगे लिखते हैं, 'आज़ाद के आदेश पर मैंने निकल भागने का रास्ता देखा। बाईं ओर एक समर हाऊस था। पेड़ की ओट से निकलकर मैं समर हाऊस की तरफ दौड़ा। मेरे ऊपर कई गोलियाँ चलाईं गईं, लेकिन मुझे एक भी गोली नहीं लगी।

जब मैं एल्फ्रेड पार्क के बीचों-बीच सड़क पर आया तो मैंने देखा कि एक लड़का साइकिल पर जा रहा है। मैंने उसे पिस्तौल दिखाकर उसकी साइकिल छीन ली। वहाँ से मैं साइकिल पर घूमते-घूमते चाँद प्रेस पर पहुँचा। ''चाँद'' के संपादक रामरख सिंह सहगल हमारे समर्थकों में से थे। उन्होंने मुझे सलाह दी कि मैं हाज़िरी रजिस्टर पर फ़ौरन दस्तखत करूँ और अपनी सीट पर बैठ जाऊँ।

पाँच हज़ार रुपये का इनाम था चंद्रशेखर पर:

चंद्रशेखर पर प्रमाणिक किताब 'अमर शहीद चंद्रशेखर आज़ाद' लिखने वाले विश्वनाथ वैशम्पायन लिखते हैं, सबसे पहले डिप्टी सुपरिटैंडैंट विशेशवर सिंह ने एक व्यक्ति को देखा जिस पर उन्हें चंद्रशेखर आज़ाद होने का शक हुआ। आज़ाद काकोरी और अन्य मामलों में फरार चल रहे थे और उन पर 5,000 रुपये का इनाम था।

विशेशवर सिंह ने अपनी शंका सीआईडी के लीगल एडवाइज़र डालचंद पर प्रकट की। वो कटरे में अपने घर वापस आये और आठ बजे सवेरे डालचंद और अपने अरदली सरनाम सिंह के साथ ये देखने गये कि ये वही आदमी हैं जिस पर उन्हें आज़ाद होने का शक है।

उन्होंने देखा कि थॉर्नहिल रोड कॉर्नर से पब्लिक लाईब्रेरी की तरफ जो फुटपाथ जाता है, उस पर ये दोनों बैठे हुए हैं, जब उन्हें विश्वास हो गया कि ये आज़ाद ही हैं तो उन्होंने अरदली सरनाम सिंह को नॉट बावर को बुलवाने भेजा जो पास में एक नंबर पार्क रोड में रहते थे।

आज़ाद की गोली विशेश्वर सिंह के जबड़े में लगी:

बाद में नॉट बावर ने एक प्रेस वक्तव्य में कहा, 'ठाकुर विशेश्वर सिंह से मेरे पास संदेश आया कि उन्होंने एक व्यक्ति को एल्फ्रेड पार्क में देखा है जिसका हुलिया चंद्रशेखर से मिलता है। मैं अपने साथ कॉन्स्टेबल मोहम्मद जमान और गोविंद सिंह को लेते गया। मैंने कार खड़ी कर दी और उन लोगों की तरफ बढ़ा। करीब दस गज़ की दूरी से मैंने उनसे पूछा कि वो कौन हैं ? जवाब में उन्होंने पिस्तौल निकालकर मुझ पर गोली चला दी।'

'मेरी पिस्तौल पहले से तैयार थी। मैंने भी उस पर गोली चलाई। जब मैं मैग्ज़ीन निकालकर दूसरी भर रहा था, तब आज़ाद ने मुझ पर गोली चलाई, जिससे मेरे बाएं हाथ से मैग्ज़ीन नीचे गिर गई। तब मैं एक पेड़ की तरफ भागा। इसी बीच विशेश्वर सिंह रेंगकर झाड़ी में पहुँचे। वहाँ से उन्होंने आज़ाद पर गोली चलाई। जवाब में आज़ाद ने भी गोली चलाई जो विशेश्वर सिंह के जबड़े में लगी।'

'जब-जब मैं दिखाई देता आज़ाद मुझ पर गोली चलाते रहे। आखिर में वो पीठ के बल गिर गये। इसी बीच एक कॉन्स्टेबल एक शॉट-गन लेकर आया, जो भरी हुई थी। मैं नहीं जानता था कि आज़ाद मरे हैं या बहाना कर रहे हैं। मैंने उस कॉन्स्टेबल से आज़ाद के पैरों पर निशाना लेने के लिए कहा। उसके गोली चलाने के बाद जब मैं वहाँ गया तो आज़ाद मरे हुए पड़े थे और उनका एक साथी भाग गया था।'

हिन्दू हॉस्टल के गेट पर छात्रों की भीड़ जमा हुई:

जिस समय आज़ाद शहीद हुए भटुकनाथ अग्रवाल इलाहाबाद विश्वविद्यालय में बीएससी के छात्र थे और हिन्दू छात्रावास में रहते थे। बाद में उन्होंने लिखा कि 27 फरवरी की सुबह जब वो हिन्दू बोर्डिंग हाऊस के गेट पर पहुँचे तो उन्हें गोली चलने की आवाज़ सुनाई दी। थोड़ी देर में वहाँ विश्वविद्यालय के छात्रों की बड़ी भीड़ जमा हो गई थी। पुलिस कप्तान मेजर्स भी वहाँ पहुँच चुके थे। उन्होंने छात्रों से तितर-बितर होने के लिए कहा, लेकिन कोई भी वहाँ से नहीं हिला। कलक्टर ममफोर्ड भी वहाँ मौजूद थे। कप्तान मेजर्स ने भीड़ को तितर-बितर करने के लिए गोली चलाने की अनुमति माँगी, लेकिन कलक्टर ने अनुमति नहीं दी। उसी समय मुझे पता चला कि आज़ाद शहीद हो गए।

नॉट बावर की कार की बॉडी में तीन छेद:

इस बीच जब एसपी मेजर्स को गोलीबारी की खबर मिली तो उन्होंने सशस्त्र रिज़र्व पुलिस के जवानों को एल्फ्रेड पार्क भेजा। लेकिन जब तक ये लोग वहाँ पहुँचे, लड़ाई खत्म हो चुकी थी।

जाते समय नॉट बावर ने हिदायत दी कि चंद्रशेखर आज़ाद की लाश की तलाशी लेकर उसे पोस्टमार्टम के लिए भेजा जाये और विशेश्वर सिंह को तुरंत अस्पताल पहुँचाया जाये। आज़ाद के शव की तलाशी लेने पर उनके पास से 448 रुपये और 16 गोलियाँ मिलीं। दोनों ही पक्ष जिन पेड़ों के पीछे थे उन पर गोलियों के निशान थे। नॉट बावर के पीछे उनकी खड़ी कार में भी गोलियाँ लगी थीं और उसकी बॉडी में तीन छेद हो गए थे।

आज़ाद के शरीर का पोस्टमार्टम सिविल सर्जन लेफ्टिनेंट कर्नल टाउनसेंड ने किया:

उस समय दो मजिस्ट्रेट ख़ान साहब रहमान कादरी और महेंद्र पाल सिंह वहाँ मौजूद थे। आज़ाद के दाहिने पैर के निचले हिस्से में दो गोलियों के घाव थे। गोलियों से उनकी टीबिया बोन भी फ्रैक्चर हुई थी। एक गोली दाहिनी जाँघ से निकाली गई। एक गोली सिर के दाहिनी ओर पेरिएटल बोन को छेदती हुई दिमाग में जा घुसी थी और दूसरी गोली दाहिने कंधे को छेदती हुई दाहिने फेफड़े पर जा रुकी थी। **विश्वनाथ वैशम्पायन लिखते हैं**, 'आज़ाद का शव चूँकि भारी था, इसलिए उसे स्ट्रेचर पर नहीं रखा जा सका। जब तक टंडन और कमला नेहरू रसूलाबाद घाट पर पहुँचे, आज़ाद का शव जल चुका था।'

आज़ाद की अस्थियाँ एकत्रित कर उनके रिश्तेदार शिव विनायक मिश्र शहर में लाये। खद्दर भंडार से एक जुलूस निकाला गया। लकड़ी के तख्त पर एक काली चादर बिछाई गई, जिस पर अस्थियाँ रखी गईं। शहर में घूमता हुआ जुलूस पुरुषोत्तम दास टंडन पार्क पहुँचा।

अस्थियों पर शहर में कई जगह फूल बरसाये गए। टंडन पार्क में पुरुषोत्तम दास टंडन, कमला नेहरू, मंगल देव सिंह और शचींद्र सान्याल की पत्नी प्रतिमा सान्याल के भाषण हुए, उस दिन पूरे शहर में हड़ताल रही।

विश्वनाथ वैशम्पायन अपनी किताब में लिखते हैं, 'सी आई डी सुपरिंटेंडेंट ने स्वीकार किया कि उन्होंने आज़ाद जैसे निशानेबाज़ बहुत कम देखे हैं। खासकर उस समय जब उन पर तीन तरफ से गोलियाँ चलाईं जा रही हों। यदि पहली गोली आज़ाद की जाँघ में ना लगी होती, तो पुलिस के लिए बहुत मुश्किल खड़ी हो जाती क्योंकि नॉट बावर का हाथ पहले ही बेकार हो चुका था।

नॉट बावर के रिटायर होने के बाद सरकार ने आज़ाद की पिस्तौल उन्हें उपहार में दे दी और वो उसे अपने साथ इंग्लैंड ले गए। बाद में इलाहाबाद के कमिश्नर मुस्तफ़ी ने जो बाद में लखनऊ विश्वविद्यालय के कुलपति बने, बावर को पिस्तौल लौटाने के लिए पत्र लिखा, लेकिन बावर ने उसका कोई जवाब नहीं दिया। बाद में लंदन में भारतीय उच्चायोग की कोशिश के बाद बावर उसे इस शर्त पर लौटाने के लिए तैयार हो गये कि इसके लिए भारत सरकार उनसे लिखित अनुरोध करे।

उनकी शर्त मान ली गई और 1972 में आज़ाद की कोल्ट पिस्तौल भारत लौटी और 27 फरवरी 1973 को शचींद्रनाथ बख़्शी की अध्यक्षता में हुए समारोह के बाद उसे लखनऊ संग्रहालय में रख दिया गया। कुछ सालों बाद जब इलाहाबाद का संग्रहालय बनकर तैयार हुआ, तो उसको वहाँ के एक विशेष कक्ष में लाकर रखा गया।

रातों-रात पेड़ को जड़ से काटा गया:

जिस पेड़ के नीचे आज़ाद मारे गए थे, वहाँ हर दिन लोगों की भीड़ लगने लगी थी। लोग वहाँ फूलमालाएं चढ़ाने और दीपक जलाने लगे।

अंग्रेज सरकार ने रातों-रात उस पेड़ को जड़ से काटकर उसका नामोनिशान मिटा दिया और ज़मीन बराबर कर दी। उसकी लकड़ी को लॉरी से उठवाकर कहीं और फैंकवा दिया गया। बाद में आज़ाद के चाहने वालों ने उसी जगह पर जामुन के एक और पेड़ का वृक्षारोपण किया और जिस मौलसरी के पेड़ के नीचे नॉट बावर खड़े थे, उस पर आज़ाद की गोलियों के निशान तब भी मौजूद थे। आज़ाद की अस्थियों में से एक अंश समाजवादी नेता आचार्य नरेंद्र देव भी ले गए थे और विद्यापीठ में जहाँ आज़ाद के स्मारक का पत्थर लगा है, उन्होंने उस अस्थि के टुकड़े को वहा रखा। आज़ाद के अंत के साथ ही हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी छिन्न-भिन्न होने शुरू हो गई थी। एक महीने के अंदर ही 23 मार्च, 1931 को भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव को भी फाँसी दे दी गई। इतने कम समय में इतने नेताओं की मौत से एच आर एस ए को बहुत धक्का पहुँचा जिससे वो कभी उभर नहीं पाया।

बी.बी.सी. संवाददाता, नई दिल्ली।

तांत्रिक चमत्कारों का पोलखाता

ब्रज गोपाल राय 'चंचल'

आज के इस वैज्ञानिक युग में भी हमारे देश में लाखों लोग ऐसे हैं जिन्हें यह विश्वास है कि तंत्रमंत्र में इतनी शक्ति है कि यदि कोई इन क्रियाओं को 'सिद्ध' कर ले तो वह अनेक अलौकिक सिद्धियों का स्वामी बन सकता है। व्यक्ति बुरी या भली 'आत्माओं' को अपने वश में कर सकता है। भूत या प्रेत को अपने काबू में कर सकता है। दूसरों के मन का भेद जान सकता है। ज़मीन में गड़े खजाने का पता लगा सकता है। सट्टे तथा लाटरी का नंबर बता सकता है। असाध्य बीमारियां ठीक कर सकता है। हज़ारों मील दूर बैठे व्यक्ति के मन का हाल बता सकता है और यही नहीं, वह चाहे तो आसमान में 'उड़' भी सकता है। ऐसे तमाम लोग भी मौजूद हैं जिन्होंने तांत्रिकों की तमाम ऐसी 'सिद्धियां' देखी हैं या सुनी हैं। तांत्रिक लोग स्वयं भी तरह तरह के चमत्कार दिखाते रहते हैं।

सवाल इस बात का है कि यदि वास्तव में ऐसी कुछ 'शक्तियां' हैं (अथवा होती हैं) और ऐसे सिद्ध पुरुष इस पृथ्वी पर मौजूद हैं तो वे इस संसार में मौजूद दुखदारिद्रय को दूर क्यों नहीं करते? कोई तांत्रिक 'अपनी भूतों की सेना' को सीमाओं पर क्यों नहीं भेज देता, ताकि देश की हजारों वर्गमील भूमि इन देशों के कब्जे से आजाद कराई जा सके?

किसी भी तांत्रिक ने कोई ऐसा अनुष्ठान या तांत्रिक प्रयास क्यों नहीं किया जिस से राजीव गांधी या इंदिरा गांधी को हत्यारों से बचाया जा सकता ? हमारे देश में 3 लाख लोग अंधे हैं, उन के नेत्रों की ज्योति तांत्रिक वापस क्यों नहीं लाते? 6 दिसंबर 1991 को बाबरी मसजिद का विध्वंस हो गया, कोई भी औलिया उसे क्यों नहीं रोक पाया?

दरअसल, तंत्रमंत्र कुछ होता ही नहीं, कुछ धूर्त और चालाक लोग आम लोगों की अज्ञानता का फायदा उठा कर उन्हें उल्लू बनाते हैं और बदले में उन से मोटी मोटी रकमें ऐंठते हैं। यहां हम आप को ऐसे तांत्रिक चमत्कारों की पोलपट्टी बता रहे हैं जिन्हें तांत्रिक लोग, लोगों पर अपना प्रभाव जमाने के लिए प्राय: दिखाया करते हैं। इन तांत्रिक चमत्कारों की पोलपट्टी जब आप जान जाएंगे तो आप को लगेगा कि ये सारे चमत्कार तो कोई भी कर के दिखा सकता है।

मजे की बात यह है कि ये (तथा और भी तमाम चमत्कार जिन का जिक्र इस लेख में नहीं भी है) सभी तथाकथित 'चमत्कार', महज हाथ की सफाई, थोड़ी सी बातों की चतुराई, कुछ रासायनिक तत्वों के प्रयोग तथा मनोवैज्ञानिक वातावरण के कारण हमें 'चमत्कार' जैसे प्रतीत होते हैं, ठीक वैसे ही जैसे जादू। ये सभी 'चमत्कार' (?) स्वयं लेखक द्वारा अनुभूत हैं, भलीभांति देखेभाले और किए हुए हैं, इसलिए इन का प्रयोग आप अपने मनोरंजन तथा दूसरों के अंधविश्वास को दूर करने के लिए निरसंकोच कर सकते हैं।

तांत्रिक चमत्कारों की असलियत

सिक्के से 'साईं बाबा' की भभूत पैदा करना :

आप ने कई बार देखा होगा कि कुछ तांत्रिक किसी की जेब से 10 पैसे का एक सिक्का निकलवा कर, उस पर मंत्र पढ़ कर, फूंक मार कर वापस देते हैं। जब व्यक्ति सिक्के को मुट्ठी में कस कर पकड़ता है तो वह इतना गरम होता है कि उसे हाथ में पकड़े रखना मुशकिल हो जाता है। थोड़ी देर में ही मुट्ठी खोलने पर सिक्के पर 'भभूत' जैसी राख की परत जम जाती है जिसे आसानी से उंगली से उतार कर माथे पर टीका लगाया जा सकता है। तमाम 'साईं बाबा' इस करिश्मे को कर के दिखाते है।

इस करिश्मे की असलियत है 'मरक्यूरिक क्लोराइड' नामक एक रसायन। यह सफेद दानेदार पाउडर होता है और किसी भी कैमिस्ट की दुकान पर आसानी से मिल जाता है। जब तांत्रिक सिक्के को होठों के पास ले कर फूंक मारता है या मंत्र पढ़ता है तभी वह इस

रसायन का बहुत ही मामूली सा अंश (1 सिक्के के लिए 2 ग्राम काफी है) अपने अंगूठे से सिक्के पर रगड़ देता है। 'रगड़' से सिक्के पर रासायनिक क्रिया होती है और वह गरम हो जाता है। रासायनिक क्रिया के कारण ही उस पर राख की परत जम जाती है।

विशेष बात यह है कि यह रसायन केवल एल्यूमीनियम पर ही रासायनिक क्रिया करता है। इसलिए केवल 10, 5 या 20 पैसे के एल्यूमीनियम के सिक्के पर ही यह 'चमत्कार' दिखाया जाता रहा है। अब ये सिक्के प्रायः चलन से बाहर हैं, इसलिए यह चमत्कार भी दम तोड़ने लगा है। अगर कोई तांत्रिक आप को 'चमत्कार' दिखाने की कोशिश करे तो उसे 50 पैसे या 1 रूपए का सिक्का पकड़ा दें, तांत्रिक बगलें झांकने लगेगा।

चुटकी बजाने पर उंगलियों से धुआं निकलना :

एक तांत्रिक चुटकी बजा कर उंगलियों से धुंआ पैदा कर देता था और फिर धुंए को 'भूत' बता कर उसे आदेश देता था, ''जा, इस आदमी पर जो जिन्नात का साया है, उसे पकड़ कर मेरे सामने ला या उसे यहां से 10 हजार कि.मी. दूर अमुक स्थान पर पीपल के पेड़ पर बांध कर आ।''

दरअसल, इस धुंए रूपी 'भूत' की रामकहानी भी 'तिल की ओट में पहाड़' है। आप दियासलाई की 10-20 खाली डिब्बियां लेकर उन्हें किसी चीनी मिट्टी की तश्तरी में जला लीजिए। डिब्बियों के दोनों किनारों पर जहां मसाला लगा रहता है। वहां की जली हुई राख को ठंडी हो जाने के बाद फूंक से उड़ा दीजिए। तश्तरी की तली में हरा चिपचिपा पदार्थ नजर आएगा। उसे अपने अंगूठे, मध्यमा तथा तर्जनी उंगली में अच्छी तरह रगड़ कर लगा लीजिए। बस, आप का जादू तैयार। अब आप चुटकियां बजाइए। आप की उंगलियों से धुआं निकलने लगेगा। घबराइए नहीं, आप की उंगलियां न जलेंगी, न झुलसेंगी। प्रदर्शन के बाद साबुन से हाथ धो लीजिए।

लकड़ी की दो छड़ों से चिनगारियां पैदा कर देना:

पश्चिम बंगाल, असम एवं उड़ीसा में तांत्रिक लोग यह चमत्कार बहुत दिखाते हैं। एक लकड़ी तांत्रिक पकड़ता है, एक 'मरीज' को पकड़ाता है। मरीज से कहा जाता है कि वह अपनी लकड़ी को तांत्रिक की लकड़ी के एक विशेष सिरे (या हिस्से) पर टकराए। अगर चिंगारियां निकलें तो यही कहा जाता है कि मरीज प्रेतव्याधा से ग्रस्त है। प्रायः सभी मरीजों द्वारा ऐसा किए जाने पर चिनगारियां निकलती हैं, किसी किसी के नहीं भी निकलतीं।

इस पाखंड का रहस्य सिर्फ यह है कि सिगरेट जलाने वाले लाइटर में जो पत्थर (चकमक पत्थर) लगा रहता है उस के 20-25 टुकड़े लकड़ी में ठोंक दिए जाते हैं। दूसरी लकड़ी में लोहे की कीलें ठोंकी हुई होती है। इन दोनों की रगड़ से वैसी ही चिनगारियां छूटने लगती है, जैसी लाइटर जलाते वक्त। यदि किसी मरीज को 'प्रेतबाधा' से मुक्त बताना हो तो उसे लकड़ी का उल्टा सिरा पकड़ा दिया जाता है।

हलदी को कुमकुम बनाइए :

बेटी के विवाह को ले कर माता पिता बहुधा चिंतित रहते हैं। इस समस्या से चिंतित लोग बाबाओं, पंडितों और तांत्रिकों के यहां चक्कर लगाते रहते हैं। हमारे एक रिश्तेदार ऐसे लोगों के सामने एक मजेदार तंत्रक्रिया करते थे। वह मिट्टी के एक प्याले में पानी में हलदी घुलवाते थे। फिर मंत्र पढ़ते हुए कहते, ''अगर कन्या का विवाह होना है तो यह हलदी कुमकुम में बदल जाएगी।'' 20-25 वर्ष की आयु तक की कन्याओं के मामले में वह हलदी को कुमकुम कर देते थे। अधिक उम्रवाली के लिए वह हलदी ही रह जाती थी।

मेरे बहुत जिद करने पर उन्होने बताया कि वास्तव में वह अपनी दाहिनी उंगलियों को चूने के पानी में भिगो लेते थे। चूने का पानी हलदी में मिलाने से लाल रंग का हो जाता है। चूने के पानी में भीगी अपनी उंगलियों को वह मंत्र पढ़ने के बहाने हलदी में घुमा देते थे। बस, हलदी कुमकुम बन जाती थी। इसी कथित कुमकुम से वह कन्या के माथे पर टीका कर के 'सौभाग्यवती भव' का आर्शीवाद दे कर, अपनी दक्षिणा ले कर चलते बनते थे।

आप भी खाइए आग :

जी हां, आप भी आग खा सकते हैं। वह भी

झूठमूठ वाली आग नहीं, सचमुच की। इस करिश्मे को तभी सीखना चाहिए जब कोई सुयोग्य प्रशिक्षक हो वरना, खतरा हो सकता है। प्राय: अनेक तांत्रिक इस दहशत भरे चमत्कार को तब कर के दिखाते है, जब उन्हें यह साबित करना होता है कि उन के पास किसी बहुत बड़े 'जिन्न या भूत' की शक्ति है।

दिल्ली में, जनक पुरी निवासी एक तांत्रिक अपने भक्तों को चमत्कृत करने के लिए यह नाटक करता रहा है और उस का दावा है कि उस पर 'संतोषी माता' की सवारी आती है। वह जलते हुए दीपक को मुंह में रख लेता है।

आइए, इस नाटक की असलियत जानें। दरअसल आग के रूप में जो चीज खाई जाती है या मुंह में रखी जाती है, वह कपूर (वैज्ञानिक नाम $C_{10}H_{10}O$) को जला कर बनाई जाती है। वैज्ञानिक नियम है कि जलती हुई कपूर की टिक्यिा में केवल ऊपरी सतह से ही लपटें निकलती है तथा उस की निचली सतह बिलकुल ठंडी रहती है। इस प्रयोग को करने वाले प्राय: कपूर की इतनी मोटी या बड़ी टिक्की इस्तेमाल करते हैं कि आग की गरमी जीभ तक नहीं पहुंच पाती।

दूसरी महत्तवपूर्ण बात है, जलते हुए कपूर को जब मुंह में रख कर मुंह बंद कर लिया जाता है तो आक्सीजन के अभाव में वह तुरंत बुझ जाता है। एक वैज्ञानिक नियम यह भी है कि चाहे जितनी आंच की तपिश हो, प्रत्येक व्यक्ति उसे 3 सेकंड तक 'झेल' सकता है, अर्थात 3 सेकंड तक उस पर आग की तपिश का असर नहीं होगा, न वह झुलसेगा। आप जलते हुए कपूर को जल्दी जल्दी दोनों हाथों में गेंद की तरह उछाल कर यह प्रयोग कर के देख सकते हैं।

यदि आप को कभी गांवों में जाने का मौका मिला हो तो आप ने जरूर देखा होगा कि ग्रामीण दहकते हुए उपले या अंगार को बड़ी आसानी से अपने हाथ से उठा कर अपने हुक्के की चिलम पर रख लेते हैं। 'आग खाने' का सिर्फ यही रहस्य है। वैसे दुनिया में ऐसा कोई नहीं है जो दहकते हुए कोयले को चबा कर खा जाए।

मंत्रबल से हवनकुंड में अग्नि प्रज्वलित करना :

दिल्ली में एक बाबा ने यज्ञकुंड में मंत्रबल से अग्नि प्रज्वलित कर के लाखों रूपयों का चढ़ावा बटोरा। यह महाशय बड़े 'सदाचारी' बनते थे, लेकिन बाद में इन पर बलात्कार तथा निर्वस्त्र महिलाओं के फोटो खींच कर उन्हें ब्लैकमेल करने के आरोप लगे। वास्तव में मंत्रबल से अग्नि प्रज्वलित नहीं हो सकती। हवनकुंड में 'मंत्रबल' से अग्नि प्रज्वलन के दो तरीके हैं- पहला, मंत्र पढ़ कर घी की आहुति दे कर अग्नि प्रज्वलित करना, तथा दूसरा 'अभिमंत्रित जल' से अग्नि प्रज्वलित करना। इन दोनों ही विधियों की पाखंडलीला इस प्रकार होती है।

हवन सामग्री में 'पोटेशियम परमैगनेट' (लाल दवा) नामक रसायन के कुछ टुकड़े मिला दिए जाते है। पोटेशियम परमैगनेट हर कैमिस्ट की दुकान पर मिल जाता है। यह कत्थई रंग का, छोटेछोटे टुकड़ों में मिलने वाला रसायन है और हवन सामग्री में मिलाए जाने पर कोई भी इसे पहचान नहीं पाता।

इस के अलावा एक रसायन और होता है ग्लिसरीन। इसे डाक्टर लोग मुंह के छालों की दवा के रूप में 'फाहे' में लगा कर देते हैं। ग्लिसरीन भी कैमिस्ट के यहां मिल जाती है। ग्लिसरीन देखने में बिल्कुल घी जैसी होती है। हवन कुंड में 'पोटेशियम परमैगनेट युक्त' हवन सामग्री डालने के बाद 'स्वाहा' करते हुए 'घी' के नाम पर ग्लिसरीन के 4-5 चम्मच डाल देने से ही हवनकुंड में स्वयमेव अग्नि प्रज्वलित हो उठती है। ऐसा सिर्फ रासायनिक प्रतिक्रिया के कारण होता है।

जहां तक जल (अभिमंत्रित जल) से अग्नि प्रज्वलित करने की बात है, यह भी बहुत सरल है। कक्षा 8 का विद्यार्थी भी जानता है कि 'सोडियम' एक ऐसा रसायन है जो पानी (यहां तक कि सीलन) के संपर्क में आते ही, पहले तीव्र धुंए तथा बाद में नीली चमकदार लौ के रूप में जल उठता है। इसी लिए इस रसायन को प्राय: मिट्टी के तेल में रखा जाता है। हवन सामग्री में बाबा लोग सोडियम के कुछ टुकड़े मिला देते हैं,

बस, पानी के कुछ छींटे पड़ते ही हवन सामग्री और सूखी लकड़ी जलने लगती है।

आप ने यह करिश्मा करते सड़क के मदारियों को भी देखा होगा। वे बकरे की हड्डियों को 'श्मशान' की हड्डी बता कर उसे चला कर दिखाते हैं और फिर पहले 'मसान की पूजा' के नाम पर तथा बाद में 'पेट का सवाल' बता कर पैसे मांगते हैं।

दो मोमबत्तियों को आपस में छुआया और दोनों जल उठीं :

यह सीधासादा जादू का खेल है। राजस्थान के एक प्रसिद्ध जादूगर ने यह खेल मुझे सिखाया था। तांत्रिक लोग इस खेल को प्रायः अपने चेलेचांटों पर रोब डालने के लिए दिखाते हैं। दो बगैर जली मोमबत्तियों के सिरों को (जहां धागा उभरा होता है) यदि मिला दिया जाए और चटचट की आवाज़ के साथ दोनों जल जाएं तो लोगों का चकित हो जाना स्वाभाविक ही है। लेकिन इस के पीछे भी केवल दो रसायनों का ही करिश्मा है।

पहला रसायन है क्रोमिक एसिड तथा दूसरा मिथाइल अलकोहल। ये दोनों पदार्थ भी रसायन बेचने वालों के यहां मिल जाते हैं। इन में क्रोमिक एसिड रवादार होता है तथा मिथाइल अलकोहल रंगरोगन के काम आता है। क्रोमिक को पीस कर एक मोमबत्ती के धागे पर अच्छी तरह लगा दें। इसी प्रकार मिथाइल अलकोहल में दूसरी मोमबत्ती के धागे को डुबो दें। आप का खेल तैयार। दोनों मोमबत्तियों के सिरों को झूठमूठ मंत्र पड़ते हुए मिला दीजिए। बस, दोनों जल उठेंगी। बाबा लोग यहीं तो करते है।

आप भी जानिए दूसरों के मन का भेद :

निहायत कम पढ़ेलिखे या फिर ज़रूरत से ज्यादा पढ़ेलिखे और खुद को चालाक समझने वाले लोगों को मूर्ख बनाने के लिए तांत्रिक लोग इस 'ट्रिक' का इस्तेमाल करते हैं। तांत्रिक कहते हैं कि आप अपना कोई प्रश्न इस कागज पर लिख कर (जो वह स्वयं देता है) इस लिफाफे में बंद कर दे। यह लिफाफा भी वह खुद ही देगा।

मजे की बात यह होगी कि लिफाफा खासे मोटे कागज का बना होगा। आप के शक की गुंजाइश खत्म हो जाएगी। इस के बाद वह लिफाफे पर मंत्र पढ़ कर हाथ फेरेगा, कान से लगाएगा और फिर भीतर लिखे प्रश्न से नहीं, उस के उत्तर से भी (उत्तर वह चाहे जो दे) अवगत करा देगा। है न ताज्जुब की बात? लेकिन इस में न तो कोई जंतरमंतर है, न कोई और शक्ति सामर्थ्य। यह एक मामूली से रसायन 'ईथर', जो हर कैमिस्ट के यहां मिलता है, का कमाल है।

दरअसल ईथर एक ऐसा रसायन है जो 'द्रव्य' के रूप में होता है, लेकिन स्पिरिट या पेट्रोल की तरह बहुत ही जल्दी उड़ जाता है। करिश्मा करने से पूर्व तांत्रिक एक छोटे से स्पंज को ईथर में भिगो कर अंगूठे तथा तर्जनी उंगली की जड़ में छिपा लेता है। प्रश्न लिखे 'बंद लिफाफे' पर 'हाथ फेरने के' बहाने वह ईथर युक्त स्पंज का टुकड़ा लिफाफे पर फेर देता है। ईथर इतना तीव्र होता है कि वह लिफाफे के कागज को 3-4 सेकंड के लिए बिल्कुल पारदर्शी बना देता है। इतना पारदर्शी कि आप उस के भीतर लिखी संपूर्ण इबारत पढ़ सकते हैं। 3-4 सेकंड में वह 'उड़' भी जाता है इसलिए जब तांत्रिक लिफाफे को वापस लौटाता है तो वह ज्यों का त्यों नजर आता है। ईथर वैसे भी रंगहीन, गंधहीन पदार्थ होता है। इसलिए कोई गंध या रंग भी नज़र नहीं आता। अब बताइए 'मन का भेद' जानने की इस ट्रिक में जंतरमंतर कहां है?

जीभ से त्रिशूल आरपार निकालना :

आप ने तीर्थस्थलों पर मंदिरों के आसपास ऐसे तमाम साधु देखे होंगे जिन की जीभ में से लगभग 1½ फुट लंबा, पतले लोहे का एक त्रिशूल आरपार निकला रहता है। ये साधु कहते हैं कि ऐसी सिद्धि उन्होने बड़े ही जपतप, मंत्रबल से प्राप्त की है। लोग इन से अभिभूत भी हो जाते हैं। लेकिन अगर आप इस सिद्धि की वास्तविकता को जान लेंगे तो रोमांचित होते हंसने लगेंगे।

दरअसल सारा करिश्मा उस त्रिशूल में छिपा है जो विशेष प्रकार से बनाया/बनवाया जाता है। त्रिशूल की डंडी में जो लूपनुमा मुड़ाव होता है, वह गाल में

छिप जाता है। इसलिए केवल ऊपर तथा नीचे का हिस्सा ही नजर आता है। जो लोग इस करतब का सार्वजनिक प्रदर्शन करते हैं (यानी त्रिशूल को जीभ के आरपार घुसाते हुए दिखाने का दावा करते है, वे प्रदर्शन के वक्त लूप वाले हिस्से को अपने दाहिने हाथ की उंगलियों से झटक कर, त्रिशूल की निचली नोंक को जीभ पर रखते हैं। इस के बाद बाएं हाथ की हथेली को मुंह पर रख कर, जीभ को वापस मुंह में सरका कर ऐसा अभिनय करते हैं मानो जीभ में त्रिशूल घुसाते हुए उन्हें अपार कष्ट हो रहा हो। जबकि इसी बीच, बाएं हाथ की हथेली को ढकेढके ही वे त्रिशूल के लूप में अपनी जीभ फंसा देते हैं बस, लोग चक्कर में पड़ जाते हैं ?

अगर कोई पाखंडी तांत्रिक या बाबा आप के सामने कोई ऐसा प्रदर्शन करने के लिए कहे तो आप उस से कहें कि वह पहले तो अपना त्रिशूल सब को दिखाए। फिर त्रिशूल के 'लूप' का कारण पूछें, तथा फिर कहें कि वह बगैर मुंह पर हथेली रखे अपना प्रदर्शन करे। हमारा दावा है कि आप के इतने सवाल पूछते ही वह बाबा अपना झोलीडंडा वहीं छोड़ कर भाग खड़ा होगा।

नारियल में भूत मारना :

दिल्ली के सीलपुर इलाके में एक मुसलिम पाखंडी तांत्रिक को मैं ने इस क्रिया को करते देखा। वह पहले 'मंत्रबल' से 'भूत' को भक्त के द्वारा लाए गए नारियल में 'कैद' करने का ड्रामा करता। इस के बाद नारियल को एक अभिमंत्रित चौकी पर रख कर वह उस पर अभिमंत्रित जल के छीटें मारता। पानी के छीटें पड़ते ही नारियल में आग लग जाती। आग बुझाने पर जब नारियल को तोड़ा जाता तो उस में से लाल रंग का पानी निकलता। तांत्रिक उस पानी को मरे हुए भूत का रक्त बताता। किसी भी साधारण व्यक्ति को यह करिश्मा रोमांचित कर देने के लिए काफी है।

लेकिन ऊपर बताए गए अन्य तमाम पाखंडभरे चमत्कारों की तरह ही यह चमत्कार भी महज एक पाखंड है। पाठक ऊपर पढ़ चुके है कि सोडियम पानी के संपर्क में आते ही जलने लगता है, इसलिए सामान्य पाठक भी सहजबुद्धि से यह अनुमान लगा सकते हैं कि नारियल के सूखे रेशों (जूट) में मंत्र पढ़ने के बहाने सोडियम के 2-4 टुकड़े घुसा देना कोई बड़ी बात नहीं है। जहां तक नारियल के पानी के लाल हो जाने की बात है, तो उस का रहस्य यह है कि 'पोटेशियम परमैगनेट' नामक रसायन का एक टुकड़ा (एक गेहूं के दाने के बराबर) नारियल के भीतर घुसा देने से नारियल के भीतर का पानी लाल हो जाता है।

पोटेशियम परमैगनेट को नारियल में घुसाने का तरीका यह है कि सभी नारियलों में (खासतौर से उन में, जिन के भीतर पानी होता है) 3 छिद्र के से निशान होते हैं, जिन्हे नारियल की आंखें व मुंह कहा जाता है। मुंह वाला छिद्र इतना मुलायम होता है कि अंगूठे के दबाव से उस में पोटेशियम के टुकड़ों को भीतर घुसाया जा सकता है। 'पोटेशियम परमैगनेट' को 'लाल दवा' के नाम से सभी जानते हैं जो प्राय: कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए कुओं में डाली जाती हैं।

'भूत' को बोतल में कैद करना :

यह भी एक 'ट्रिक' है जो मूलत: चीन के आदिवासी क्षेत्रों में बहुतायत से प्रचलित है। भारत में जादूगार शंकर इसे स्टेज पर दिखाते रहे हैं, जबकि बंगाल, बिहार और असम के अशिक्षित ग्रामीणों को यह जादू दिखा कर वहां के तांत्रिक खूब ठगते है। इस ट्रिक की भी दो विधियां हैं:

1. एक कम चौड़े मुंह वाली सुराही व कलशनुमा चीनी मिट्टी का बरतन लीजिए। उस में एक रबड़ की गेंद डाल दीजिए। गेंद भी इतनी चौड़ी हो कि वह बरतन में कठिनाई से ही जा सके। दर्शकों को इस गेंद के बारे मे पता नहीं चलना चाहिए। इस के बाद एक पतली रस्सी लीजिए। बरतन को उलटपुलट कर मंत्र पढ़ते रहिए। ध्यान रखें कि गेंद बाहर न निकल आए। इस के बाद कथित 'भूत' को बुला कर 'छू मंतर' कहते हुए उसे बरतन में घुसा दीजिए।

अब दर्शकों से कहिए कि 'मैं इस रस्सी के जरिए भूत को बांध कर इस बरतन समेत उसे पीपल के पेड़ पर उलटा लटका दूंगा'। दर्शकों में विश्वास जमाने के लिए रस्सी का एक सिरा बरतन में डालिए। फिर

(मंत्र पढ़ते हुए) वापस खींचिए, रस्सी आसानी से बाहर आ जाएगी। ऐसा दो तीन बार कीजिए। कहिए कि भूत बड़ा बदमाश है, काबू में ही नहीं आता। फिर बड़े ही स्वाभाविक तरीके से, रस्सी के सिरे को डाले हुए ही, बरतन को उलटा कर दीजिए। बरतन उलटा करते ही गेंद रस्सी के साथ बरतन के मुंह की चौड़ाई के बीच कस जाएगी। रस्सी के निचले सिरे को थोड़ा टाइट कर दीजिए। बस गेंद के कसाव के कारण पूरा बरतन ही रस्सी के सहारे लटक जाएगा। लीजिए आप का 'भूत' कैद हो गया।

2. कुछ लोग यही ट्रिक कुछ अलग बातें बना कर चावलों के जरिए करते हैं। यदि आप से कोई कहे कि सूखे (कच्चे) चावलों से भरे मरतबान में चाकू घोंप कर क्या उसे मर्तबान सहित ऊपर उठाया जा सकता है, तो सहजबुद्धि से आप इनकार ही करेंगे। लेकिन यह संभव है। आप घर पर ही इस का प्रयोग कर के देखें। चावलों से भरे मर्तबान (इस का भी मुंह बहुत कम चौड़ा, कलशनुमा होना चाहिए) में एक बड़ी छुरी से बारबार प्रहार कीजिए, जैसे चावलों को गोद रहें हों। 25-30 बार ऐसा करने से चावल भीतर ठुंसते जाएंगे और एक क्षण ऐसा आएगा जब चावल के दाने छुरी को इतनी तीव्रता से जकड़ लेंगे कि आप छुरी समेत चावलों से भरे बरतन को आराम से उठा लेंगे। तांत्रिक इस क्रिया को 'भूत मारना' कह देते है।

नीबू से खून निकालना :

शहरी क्षेत्रों में तो हर पढ़ा लिखा व्यक्ति इस 'तंत्र' की ट्रिक को समझ गया है लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में ओझागुनिया इस 'तंत्र' के जरिए अभी भी लोगों को बेवकूफ बना देते हैं। वैसे नीबू से 'खून' निकालने का तंत्र प्रायः व्यापारी लोगों के भूमिपूजन, दुकान के उद्घाटन या मुहूर्त आदि पर कराया जाता है। 'बुरी नजर वालों', 'दुश्मनों' तथा 'दुष्ट आत्माओं' की शांति के लिए यह टोटका होता है। पूजा की थाली में ही मंत्र पढ़ कर एक नीबू काट देते हैं। बस, नीबू से बजाय 'रस' निकलने के 'खून' निकलना शुरू हो जाता है।

तांत्रिक लोग यह 'गुर' हर किसी को नहीं बताते, लेकिन हम आप को बता देते हैं कि सारा करिश्मा उस 'छुरी' में होता है। आप किसी भी साधारण छुरी से कटहल काटिए (या कटहल का 'सफेद रस' छुरी में लगा लीजिए) छुरी को सुखा लीजिए। नीबू से 'खून' निकालने का 'जंतरमंतर' तैयार हो गया। कटहल के रस और नीबू के रस में कुछ ऐसी रासायनिक क्रिया होती है कि नीबू का रस लाल हो जाता है।

हमारे एक परिचित महाराज ने हमें एक बार बड़ा मजेदार किस्सा सुनाया। वह एक व्यापारी के मुहूर्त में गए। उन्हें मनमाफिक दक्षिणा नहीं मिली तो मन ही मन बड़े कुपित हुए। नई दुकान का मुहूर्त था। दुकान में नई नई सफेदी (कलई/चूना) कराई थी। महाराज ने बजाय हलदी के घोल से स्वस्तिक का शुभ चिह्न बनाने के दीवार पर रोली से स्वस्तिक चिह्न बना दिया। देखते ही देखते वह चिह्न स्याह काला पड़ गया। काला चिह्न दिखा कर महाराज ने लाला से गंभीर मुद्रा में कहा, 'लाला, तेरे ऊपर शनि का प्रकोप हैं।' लाला डर गया और उन से 'ग्रहशांति' के लिए एक मोटी दक्षिणा महाराज को थमा दी। 7-8 दिन बाद महाराज ने हल्दी से चिह्न बना दिया तो वह लाल रंग में खिल उठा। 'हलदी को कुमकुम बनाइए' वाली टिप्पणी में पाठक पढ़ ही चुके हैं कि चूने और हलदी के मिलने से जहां लाल रंग बन जाता है, वहीं रोली और चूने के मिलने से काला रंग बन जाता है।

असलियत 'कर्णपिशाचिनी सिद्धि' की :

तथाकथित कर्णपिशाचिनी सिद्धि की पोल अनेक पत्रकारों ने, खासतौर से प्रसिद्ध जादूगर शंकर ने कई बार खोली हैं। 'कमेटी फार दि साइंटिफिक इनवेस्टिगेशन आफ क्लेम्स आफ दि पैरानार्मल' नामक संस्था के संयोजक बी.प्रेमानंद तो इस सिद्धि के 'मास्टर' हैं और वह पूरे भारत में इस की पोल खोलते रहे हैं। यह भी कोई सिद्धिविद्धि नहीं है। इस का करिश्मा सिर्फ यह है कि 15-20 कागज के टुकड़ों पर लोगों को मनचाहे प्रश्न लिखने के लिए कह कर किसी बरतन, हैट या डिब्बे में वे डाल लिए जाते हैं और बाद में एकाएक कागज को कान से स्पर्श कर के, बगैर पढ़े प्रश्न तथा उन के उत्तर बता दिए जाते हैं।

लखनऊ के एक ढोंगी तांत्रिक बालटी बाबा इस नाटक को 'बालटी' में परचियां रख कर करते थे और इसी बदौलत 1978 में उन का 'रंग' ऐसा जमा था कि वह एक निगम के 'चेयरमैन' तक बना दिए गए थे। बाद में जब उन की पोल खुली तो वह ऐसे अंतर्धान हुए कि उन का आज तक अतापता नहीं है। पाठक देखेंगे कि यह कितनी मामूली ट्रिक है और ढोंगी तांत्रिक इस के जरिए लोगों को कैसे ठगते हैं।

सर्वप्रथम अपना एक सहयोगी दर्शकों/भक्तों के बीच दिया जाता है। एक 'प्रश्न' पहले से ही निर्धारित होता है जिसे तांत्रिक और सहयोगी दोनों ही जानते हैं। सहयोगी समेत 10-15 व्यक्तियों से परिचयों पर प्रश्न लिखवाकर उन की गोलियां बना कर किसी बालटी या हैट में डाल दी जाती है। तांत्रिक एक गोली उठा कर कान से लगाता है और ऐसा अभिनय करता है मानो 'कर्णपिशाचिनी' उस के कान में बता रही है कि परची में क्या लिखा है। पहली बार तांत्रिक वही 'प्रश्न' बोलता है जो उस के 'सहयोगी' का होता है और उसे पहले से पता होता है। कोई उलटासीधा जवाब बता कर 'सहयोगी' को खड़ा कर दिया जाता है ताकि अन्य लोग समझें कि वास्तव में 'कर्णपिशाचिनी' ने 'ठीक' बताया है।

इस के बाद कान से हटा कर तांत्रिक उस परची को खोल कर, उस में लिखे प्रश्न को पढ़ कर, जो कि किसी दूसरे व्यक्ति का होता है, फाड़ कर फेंक देता है। अब तांत्रिक अगली परची को उठा कर कान में लगाता है। लेकिन जो प्रश्न उस के पहले वाली पर्ची में पढ़ लिया होता है, उसे बता देता है। इस प्रकार 'क' नामक व्यक्ति का पहले से पढ़ा हुआ प्रश्न 'ख' नामक व्यक्ति की परची को कान में लगा कर बताया जाता है। यह क्रम निरंतर चलता रहता है। इस ट्रिक में सब से खास बात यह ध्यान में रखने की है कि अंतिम पर्ची उसके सहयोगी की ही उठाई जानी चाहिए। भले ही उस को पहचानने के लिए पर्ची में कोई 'चिह्न' बनाया जाए।

तांत्रिक लोग इस कथित 'सिद्धि' के बहाने, 'उत्तरों' के नाम पर लंबेचौड़े पूजा, अनुष्ठान, जपतप, हवन इत्यादि की जरूरत बता कर मोटा 'नामा' कूटते हैं।

बालों से 'पवित्र जल' निकालना :

सातवें दशक में दक्षिण भारत के 'सत्य साईं बाबा' नामक एक व्यक्ति ने अपने बालों में से 'पवित्र जल' निकाल कर हजारों लोगों को बुद्धू बनाया था। अनेक वैज्ञानिक संस्थाओं ने इस बाबा को चुनौती दी कि वह वैज्ञानिकों के एक दल के समक्ष अपने इस चमत्कार को कर के दिखाए। लेकिन वह ऐसा नहीं कर सके।

पिछले दिनों जब उन्होने एक अस्पताल के उद्घाटन के अवसर पर एक इंजीनियर के गले में 'हवा में हाथ घुमा कर' 'शून्य' में से सोने की माला 'उत्पन्न' कर के पहनाई तो उन के 'चमत्कार' की पोल खुल गई क्योंकि उन्होने अपने जिस 'सहयोगी' से चुपचाप वह माला हाथ में ली तथा बाद में हवा में हाथ घुमा कर इंजीनियर के गले में डाली, इन सभी घटनाओं की वीडियो तसवीरें खिंच गईं।

पानी में डूबे एक छोटे से स्पंज के टुकड़े को अपने अंगूठे और तर्जनी के बीच दबा कर तथा कुशलता से छिपा कर मंत्र पढ़ने का बहाना करते हुए बालों में से 'पवित्र जल' निकाल देने में तो कोई 'जादू' या 'ट्रिक' भी नहीं है। यह तो सरासर धोखा है। इलायची, भभूत जैसी चीजें भी ऐसे ही निकाली जाती है।

दीपक की कांपती लौ पर अंगूठी का नृत्य :

उस तांत्रिक के पास एक अंगूठी थी, जिसे वह पहने रहता था। आटा, हलदी, रोली, चावल, सिंदूर वगैरह से वह 'पूजा का घट' (स्थान) बनाता। फिर उस के बीचोबीच शुद्ध देशी घी का एक बड़ा दीपक जलाता। फिर पूजापाठ करने का ढोंग कर के अपनी अंगूठी में किसी 'आत्मा' का आह्वान करता। मजे की बात यह होगी कि दीपक की लौ जैसे जैसे कांपती या हिलती, अंगूठी स्वयमेव फुदकती या हिलने लगती। अंगूठी के हिलने फुदकने को वह 'आत्मा' की प्रसन्नता या अप्रसन्नता बताता या फिर ऐसे प्रश्नों का उत्तर बताता कि किसी के घर गड़ा हुआ धन है या नहीं, भूतव्याधा है या नहीं, पतिपत्नी के संबंध मधुर रहेंगे या नहीं।

इस नाटक का सारा रहस्य उस **... शेष पृष्ठ 48 पर**

स्वतंत्रता संग्रामी-जो अंधविश्वास के खिलाफ लड़े

- बलबीर लौंगोवाल
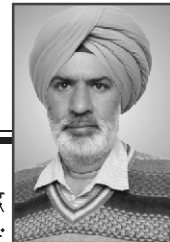
सदियों से अंधविश्वास भारतीय समाज की रग-रग में समाए हुए हैं, इनकी जड़ें बहुत गहरी है, कहीं यह प्रत्यक्ष रूप में प्रकट होते दिखाई देते हैं, और कहीं अप्रत्यक्ष रूप में मौजूद हैं। जादू-टोना, ताबीज, मंनत, भविष्यवाणी आदि, विशेष दिनों पर मंनते, परा-प्राकृतिक भाव, तथाकथित दैवीय शक्तियों में लोगों के बड़े हिस्से की श्रद्धा, भूत, प्रेतों परियों, देवताओं आदि जैसी कल्पनाओं, कितने ही अंधविश्वासों के ऐसे रूप हमारे समाज में प्रचलित हैं, और उनके खिलाफ लड़ाई का इतिहास भी इतना ही लंबा है।

The Pew Research Centre के अभी आए सैंपल सर्वे (Sample Survey) में यह तथ्य सामने आया है:

भारत की लगभग आधी आबादी फरिश्तों, स्वर्ग-नरक, प्रेत, आत्मा में, 38% पुनर्जन्म में, 76% कर्म सिद्धांत में और 70% किस्मत में भरोसा रखती है और ये अंधविश्वास हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई सभी धर्म के लोगों में पाए जाते हैं।[1]

भारत लगभग 190 साल, प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से ब्रिटिश हुकूमत का गुलाम रहा है। भारतीय लोगों के गले से गुलामी का फंदा उतारने के लिए कितने ही आंदोलनों, संगठनों ने संग्राम में अपना ऐतिहासिक योगदान डाला है। भील विद्रोह, 1857 से लेकर 1947 तक के ये संघर्ष का इतिहास भारतीय लोगों की अनमोल विरासत है। स्तर विशेष पर ब्रिटिश हुकूमत के दमन के खिलाफ उठी लोक लहरें, जैसे पगड़ी संभाल जट्टा. और इसके इलावा सैकड़ों ही ऐसी लहरें, आंदोलनों और संगठनों का उभार हुआ जो भारतीय लोग

ों की समुचित गुलामी को संबोधित थे। 1857 का ग़दर, हिंदी एसोसिएशन ऑफ पेसिफिक कोस्ट (ग़दर पार्टी), रियासती प्रजामंडल (रजवाड़ा शाही और ब्रिटिश हुकूमत की दोहरी गुलामी के खिलाफ उठी लोग लहर), बब्बर अकाली लहर, हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ, हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ, भारत छोड़ो आंदोलन, खिलाफत आंदोलन, सिविल ना फरमानी लहर आदि की भारत की आजादी की जंग में ऐतिहासिक भूमिका रही है। हजारों ही लोग शहीद हुए, लाखों ने जेल, जलावतनी, शारीरिक दमन, भूमिगत जीवन, जमीन-घरों आदि की नीलामी, तथा और कितने ही तरह के जुल्म को सहन किया। यहां काले पानी (अंडेमान) जेल के शहीदों, देशभक्तों पर दमन भारतीय इतिहास का मन झकझोरने वाला पन्ना है, वहां उससे भी कहीं ज्यादा है हंसकर फांसी के फंदे को गले में डालने की शानदार सांस्कृतिक भारतीय विरासत।

बहुत सारे स्वतंत्रता संग्रामियों ने ऐसी उपनिवेशवादी हकूमत, जिसके राज में कभी सूरज नहीं छिपता था, के खिलाफ लड़ते, वैज्ञानिक विचारधारा से लैस होते हुए, महसूस किया कि धर्म, मजहब, अंधविश्वास आदि भारतीय लोगों की इस लड़ाई में एक बड़ी रुकावट हैं, किस्मतवादी फलसफा लोगों को यह हामी भरने पर मज़बूर करवाता है कि यह गुलामी तो इनकी किस्मत में लिखी हुई है। वे गुलामी के खिलाफ लड़ी जा रही उस संगठित लड़ाई के साथ लोगों को विभिन्न रूढ़ियों से उभारने के लिए विचारधारक तौर पर अंधविश्वास के खिलाफ लड़ाई में अपनी लेखनी के जरिये लोगों में वैज्ञानिक चेतना लेकर जाने के एक प्रयास के रूप में कोशिश करते हैं इस बात का प्रमाण उनकी लिखितों में स्पष्ट दिखाई देता है।

अध्ययन करते समय नजर आए कुछ स्वतंत्रता संग्रामियों को मैं उनके ही शब्दों के जरिए उन्हें आपके रूबरू करवाने का प्रयास करूंगा।

देश को आजादी और समानता का रास्ता दिखाने वाली पहली पार्टी-गदर पार्टी, जो मार्च 1913 में अमेरिका में भारतीय मेहनतकशों, भारतीय जलावतन देशभक्तों, भारतीय विद्यार्थियों की सांझी कोशिश के परिणाम के रूप में आस्तित्व में आई[2], के प्रधान बाबा सोहन सिंह भकना अपने एक लेख में शीर्षक 'वहम' के अंतर्गत नौजवानों को संबोधित करते हुए लिखते हैं: आप राजनीतिक आदमी हो, आपको वहमों में नहीं फंसना चाहिए। सच्चा मानवीय

धर्म यह है-ज़िंदा इंसानों की इज्जत करो, बीमार की संभाल करो और मरने के बाद सिर्फ मुर्दा देह को ठिकाने लगा दो। पुजारियों के परलोक के सिद्धांत से बचो। किसी पाठ आदि का फल मरने वाले को नहीं पहुँचता, यह सब भ्रम है। आज के वैज्ञानिक युग में वहम परस्ती का शिकार होने से बड़ी भूल क्या हो सकती है? [3]

'मेरा अकीदा' शीर्षक के अंतर्गत बाबा सोहन सिंह भकना लिखते हैं कि: यह ठीक है कि मैं भगवान के नाम की माला तो नहीं जपता, पर उन दुनिया भर के शहीदों, चाहे वह किसी भी देश या कौम में पैदा हुए हैं, जिन्होंने दुखी दुनिया को जालिमों, ठगों और वहम परस्तों के पंजे से छुड़वाने के लिए अपनी आहुतियां दी-के नाम की माला जरूर जपता हूं। यही मेरा अकीदा है ओर यही मेरा धर्म है।[4]

पदार्थ शक्ति अपने आप में स्वायत्त है। अपने प्राकृतिक नियम अनुसार बगैर किसी और बाहरी दखल के आस्तित्व में आई है। इसे बनाने या नचाने वाला कोई भगवान नहीं है।[5]

लाला हरदयाल गदर पाटी के महासचिव थे। पार्टी के गुप्त कार्यों को संपूर्ण करने के लिए चुने तीन सदस्यों के कमीशन में बाबा सोहन सिंह भकना और शहीद काशी राम मडौली के साथ वो भी एक सदस्य थे।[6] उन्होंने यह भी तज़वीज़ पेश की कि भारत को ब्रिटिश बेड़ियों से मुक्त करवाने के लिए, भारतीयों में इंकलाबी विचारों के प्रसार के लिए पंजाबी व उर्दू में सप्ताहिक अखबार शुरू किए जाएं। ब्रिटिश सामराज के विरुद्ध हुए 1857 के गदर की याद में सप्ताहिक अखबार का नाम 'गदर' रखा जाए। इसके बाद इस नाम की प्रसिद्धि के कारण पार्टी का नाम भी गदर पार्टी प्रसिद्ध हो गया।[7] लाला हरदयाल तर्कशील सोच के धारणी थे और हर विचार को किंतु की कसौटी से परखते थे।[8]

लाला हरदयाल लिखते हैं कि-सभी धार्मिक रीति और रिवाजों की निंदा करनी चाहिए। इस धोखाधड़ी का जोरदार विरोध करना चाहिए। आपको आपने आस-पास के लोगों को यह शिक्षा देनी चाहिए कि तीर्थ यात्रा करना, सूरज की पूजा करना, ताबीज बनवाना, खून की बलि देना, मंनत मानना, पत्थर की पूजा करना, साधु के चोले को धो कर पीना या पूजा करना, मढ़ियों की पूजा करनी, मूर्तियों की पूजा करने आदि से कुछ भी प्राप्त नहीं होता। ऐसे मूर्खतापूर्ण कामों से दूर रहना चाहिए। सूरज की पूजा ना करो बल्कि उस विज्ञान को प्यार करो जिससे सूरज की खोज हुई है। तावीज मत बांधो बल्कि प्यार की रेशम डोरी से अपने दिल एक दूसरे से बांधो। पवित्र अग्नियों में ईंधन ना डाले बल्कि भरातरी भाव की आग अपने अंदर जलाए रखे। काली माता या अल्ला मिया के अदब में बेजुबान जीवों की हत्या न करे बल्कि अपने अंदर के भेड़िए और सांप को मारे। बुद्ध के दांतों की ही पूजा मत करते रहो बल्कि उनमें से निकले शब्दों को सुने। भगवान के सैकड़ों/हजारों नामों का जाप मत करो, बल्कि वैज्ञानिकों को याद करो जिन्होंने मनुष्य को महान देन दी है। धार्मिक स्थानों की परिक्रमा करने की जगह, दुनिया की यात्रा करे और ज्ञान प्राप्त करे।[9]

भारत के क्रांतिकारी शहीद भगत सिंह अंग्रेजों को जबर्दस्त टक्कर दे रही भारत की क्रांतिकारी लहर को धार्मिक मनोभूमि से निकाल कर वैज्ञानिक रास्ते पर लाते हुए उस को समानता पर आधारित, शोषण रहित समाज की सृजना के बड़े उद्देश्य समाजवाद के साथ जोड़ते हैं, काकोरी के शहीद राम प्रसाद बिस्मिल ने गीता के शलोक उच्चारते, शहीद अशफाकउल्ला खां ने कुरान की आयते पढ़ते हुए फांसी के फंदे को चूमा था, भगत सिंह इस फिजा में 'इंकलाब-जिंदाबाद' और 'साम्राज्यवाद-मुर्दाबाद' के नारे ले कर आते है। वह रोमांसवादी इंकलाबियों को वैज्ञानिक समाजवादी इंकलाबियों में तब्दील करने की ऐतिहासिक भूमिका अदा करते हैं। यहां हमारा उद्देश्य राम प्रसाद बिस्मिल या अशफाकउल्ला खान की शहादत को कम करके दिखाना नही है, बल्कि हम भारत के हजारों लोगों की लड़ाई को एक पड़ाव से दूसरे पड़ाव में दाखिल होने पर चर्चा कर रहे है। भगत सिंह यह भी स्पष्ट तौर पर ऐलान करते हैं कि मैं कोई स्वतंत्रता संग्रामी नहीं, मैं समाजवादी विचारों का प्रचारक हूं। भगत सिंह लिखते हैं कि : Any man who stands for progress has to criticize, disbelieve and challenge every item of the old faith. Item by item he has to reason out every nook and corner of the prevailing faith. If after

considerable reasoning one is led to believe in any theory or philosophy, his faith is welcomed. His reasoning can be mistaken, wrong, misled and sometimes fallacious. But he is liable to correct because reason is the guiding star of his life. But mere faith and blind faith is dangerous, it dulls the brain and makes a man reactionary. A man who claims to be a realist, has to challenge the whole of the ancient faith. If it does not stand the onslaught of reason, it crumbles down.[10]

शहीद भगत सिंह 'विद्रोही' नाम के नीचे मई 1928 में 'किरती' में 'अराजकतावाद क्या है' नाम से शुरू की तीन किस्तों की लड़ी में अराजकतावादियों के हवाले से लिखते है-

पहले पहले जब लोगों का ज्ञान बहुत कम था, उस समय वह हर आसमानी ताकत से डरते रहते थे। आत्मविश्वास उनमें बिल्कुल भी नहीं रहा था, अपने आप को खाक का पुतला कहने लगे। वह कहते थे कि - मज़हब, आसमानी ताकत, खुदा अज्ञानता का परिणाम है, उनकी हस्ती को मिटा देना चाहिए। 'जो कुछ भी है, भगवान ही है, आदमी तो कुछ भी नहीं है। मिट्टी का पुतला है' इस विचार के मन में आते ही आत्मविश्वास भाव मर जाता है। जिस समय तक यह डर मौजूद है, उस समय तक पूर्ण सुख और शांति नहीं हो सकती।[11]

प्रमाणिक ऐतिहासिक किताब 'हिंदुस्तान गदर पार्टी', 'मेरठ साजिश केस' के लेखक, इतिहासकार और स्वतंत्रता संग्रामी कामरेड सोहन सिंह जोश अपने दाह - संस्कार संबंधी अपनी वसीयत में लिखते हैं -

''परमात्मा, मनुष्य की संरचना नहीं करता बल्कि परमात्मा की संरचना मनुष्य ने की है। स्वर्ग और नरक की सभी कहानियां मिथक कहानियां हैं जिनका असलियत में कोई आधार नहीं है। मेरी 'आत्मा' की 'शांति' के लिए कोई पाठ नहीं होना चाहिए, ना ही कोई अरदास होनी चाहिए।''

गोरी नौकरशाही, उनके पुलिस और जेलाधिकारी राधा मोहन गोकुल जी को बहुत खतरनाक समझते थे। जेल से रिहा होने के बाद आप ने स्पष्ट कहा था कि ''मेरा स्थान सुरक्षित रखना, मैं जल्दी ही फिर वापिस आऊंगा।'' ऐसे निडर आजादी संग्रामी, लेखक, वकता और संपादक बहुत कम लोग है।[12]

उनके शब्दों में - 'अंधविश्वास की जननी अज्ञानता है, इसके माता-पिता डर और भय है और इसकी संतान है - घोर दुख। कब्रें, स्माधियों, पेड़ों, पशु पक्षियों की पूजा से, ताबीज बांधने से, अच्छे लोगों के बालों, दांतों और नाखूनों की पूजा करना, चिता या शमशान की राख, यह कैसे अच्छी या बुरी घटना को होने से रोक सकते हैं? भूत, प्रेत, चुडैल, देवी आदि का आना रोगी दिमाग की निशानी है। अंधविश्वास के कारण पता नहीं कितने बच्चों की बलि दी जाती है, और कितनी ही औरतों को डायन कह कर मार दिया जाता है। वैज्ञानिक समझ के साथ ही इसे रोका जा सकता है।'[13]

ज्ञानी हीरा सिंह दर्द ने गुरुद्वारा सुधार लहर में हिस्सा लिया। वह 'अकाली' अखबार के सहायक संपादक थे। वह अंग्रेज हुकूमत के खिलाफ लड़े। अपने एक लेख 'भूत और प्रेत' में लिखते हैं-

''जब बड़े होकर विज्ञान और समाजवाद की बातें पढ़ीं, तो मेरा मन बिल्कुल साफ हो गया कि अज्ञानता और अनपढ़ता के कारण कई वहम-भ्रम के साथ भूत, प्रेत, जिन, चुड़ैल आदि ख्याल भी प्रचलित होते रहे हैं। वर्तमान वैज्ञानिक युग में इनकी कोई जगह नहीं है। इनसे समाज को बहुत हानि पहुंच रही है और उन्नति में रुकावटें पड़ रही है।''[14]

मन्मथ नाथ गुप्त क्रांतिकारी व इतिहासकार थे। वे हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ (HRA) के सक्रिय कार्यकर्ता थे। काकोरी कांड में 14 साल की सख्त कैद की सजा हुई, कम सजा होने का कारण इनकी उस समय कम उम्र थी। यह सजा काटने के बाद भी ये अनेकों बार जेल गए। इतिहासकार सुधीर विद्यार्थी लिखते हैं कि -

मन्मथ नाथ पदार्थवादी थे। वे कहा करते थे कि जनेऊ के ऊपर कमीज पहन लेने पर कोई नास्तिक नहीं हो जाता। किसी के बेडरूम में झांक कर देखना चाहिए कि वह पूजा पाठ करता है या नहीं। इस मुद्दे पर मन्मथ नाथ कम्युनिस्ट पार्टी की बार बार आलोचना करते थे जिन्होंने अपने शासित राज्य में जनता में वैज्ञानिक सोच विकसित करने के लिए कोई सार्थक काम नहीं

किया। बंगाल में कम्युनिस्टों ने मार्क्स का झंडा भी पकड़े रखा, और दुर्गा पूजा का त्यौहार भी मनाते रहे।[15]

क्रांतिकारी मनिंद्र नाथ बैनर्जी, जिनकी 20 जून 1934 को फतेहगढ़ केंद्रीय जेल में लंबी भूख हड़ताल के कारण शहादत हो गई थीं, जब मृत्यु शैया पर थे तो उनके कुछ साथियों ने उनकी सलामती के लिए भगवान को प्रार्थना करनी शुरू कर दी तो उन्होंने अंग्रेजी में उन्हें फटकार लगाते हुए कहा कि ''चुप-चुप। कोई भगवान नहीं है। मेरा इसमें कोई विश्वास नहीं है।''[16]

काकोरी कांड में फांसी लगने वाले शहीद राजेंद्र लहिड़ी, जिन्होंने मार्क्सवादी और वैज्ञानिक साहित्य का डट कर अध्ययन किया था और इस विचारधारा को धारण भी किया था, जीवन के आखिरी पड़ाव में इस रास्ते से थिरक गए थे, कारण चाहे कुछ भी रहे हो।[17]

ऐतिहासिक अध्ययन से यह बात स्पष्ट होती है कि गदर पार्टी ने सचेत तौर पर धर्म को आड़े रख कर अपने संगठन का निर्माण किया है। अंधविश्वास का मसला मुख्य तौर पर धर्म के साथ जुड़ा हुआ मसला है। गदर पार्टी ने अपने संविधान में शामिल किया -

धर्म पर व्यक्ति का निजी मसला होगा धार्मिक मसलों पर किसी बहस की कोई इजाजत नहीं होगी।[18]

हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र संघ के अंदर शहीद भगत सिंह ने वैज्ञानिक बहसों के जरिए अपने साथियों को अंधविश्वास,रूढ़ियों, धर्म की खलजगन आदि से उभारा।

अपनी लिखत 'मैं नास्तिक क्यों हूँ' के ज़रिए उन्होंने खुद को नास्तिक घोषित किया है और बहुत जबर्दस्त तर्क से अपना पक्ष पेश किया, जिसका किसी भी धर्म दर्शन के पास कोई जवाब नहीं। इसलिए अंधविश्वास के खिलाफ लड़ाई लड़ने वाले बहुत स्वतंत्रता संग्रामी भी हमें गदर पार्टी और हिंदुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र संघ में ही मिलते हैं।

संपादक- 'तर्कशील' द्विमासिक बुलारा, तर्कशील सोसायटी पंजाब। 98153-17028

अनुवाद - अजायब जलालआना

स्रोत - हवाले

1. लेख ''भारत में अंधविश्वासों की जड़ें'' (नवजोत पटियाला), मैगजीन ''तब्दीली पसंद नौजवानों की ललकार-वर्ष 10, अंक 23 (16 से 31 जनवरी 2022)।

2. शिलालेख, गदर पार्टी यादगार, गांव भकना (अमृतसर)

3. लेख ''दुख'' (बाबा सोहन सिंह भकना), किताब ''गदर पार्टी के बानी प्रधान- बाबा सोहन सिंह भकना'', संपादक: प्रोफेसर मलविंदरजीत सिंह बड़ैच, सब संपादक - अमोलक सिंह, पन्ना 106, तर्क भारती प्रकाशन, बरनाला

4. किताब वही, पन्ना 89, लेख ''देश भगत यादगार हाल'', जीवन संग्राम (भाग-2)

5. किताब वही, पन्ना 162, लेख, ''प्रकृतिवाद'' (मादा)

6. किताब, ''हिन्दुस्तान गदर पार्टी का संक्षेप इतिहास'', कामरेड सोहन सिंह जोश, पन्ना 109, प्रिंट मई 2007, चेतना प्रकाशन लुधियाना

7. किताब वही, पन्ना 108

8. किताब, ''धर्म, भगवान और मनुष्य'' (चुनी लिखते- लाला हरदयाल), संग्रह कर्ता: दीप दिलबर, दिलदीप प्रकाशन, समराला, लुधियाना, किताब के पीछे टाइटल, पन्ने पर गदरी बाबा भगत सिंह बिलगा की ओर से लाला हरदयाल के बारे में टिप्पणी

9. किताब वही, लेख, ''तुलनात्मक धर्म'' (Comparative Religion), पन्ना 13, 14

10. Book 'Why I am an atheist "(Bhagat Singh), with an introduction by Bipan Chandra, National Book trust, India, page 12, Edition 2013

11. किताब, ''शहीद भगत सिंह व उनके साथियों की लिखते'', संपादक-जगमोहन सिंह, चेतना प्रकाशन, लुधियाना, प्रिंट मार्च 2000, पन्ना 139, 142

12. किताब 'धर्म का ढकोसला' (राधा मोहन गोकुल), सम्पादक: कात्यायनी-सत्यम, राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ, प्रथम संस्करण: जनवरी 2006, पंना 6, शिव पूजन सहाय की ओर से राधा मोहन गोकुल जी के संबंधी टिप्पणी

13. किताब वही, लेख 'अँध-विश्वास',पंने 39, 42, 43

14.किताब ''मेरी इतिहासक यादें''(भाग-1, 2)-हीरा सिंह दर्द, सम्पादक: डॉ० हरजीत सिंह, लोक गीत प्रकाशन, मोहाली-चंडीगढ़, 2017, पंना 159

15. लेख -''मन्मथ नाथ गुप्त-एक नास्तिक क्रांतिकारी का सफर'', लेखक : सुधीर विद्यार्थी, हिंदी मैगज़ीन, 'फिलहाल', अप्रैल 2019, पन्ना 7

16. - वही -, 17.- वही -

18. किताब, ''हिंदुस्तान गदर पार्टी का संक्षिप्त इतिहास'', लेखक सोहन सिंह जोश, पन्ना 109।

रिपोर्ट

फीरा का 12वां राष्ट्रीय सम्मेलन

– बलवंत सिंह लेक्चरार

फीरा का बारहवां राष्ट्रीय सम्मेलन 29–30 अक्तूबर को बरनाला,पंजाब के तर्कशील भवन में आयोजित हुआ। तर्कशील भवन के प्रांगण में सुबह ही विभिन्न राज्यों से प्रतिनिधि पहुंचने लगे। सतपाल सलोह, भीम बरनाला, सुरजीत टिब्बा, हरिंदर कौर, बलराज मौड़, रणधीर गिलपती, जसवंत मोहाली और हरिंदर लाली आदि पंजीकरण प्रक्रिया में शामिल हुए। कुलदीप नैणेवाल और उनकी पत्नी मनीषा मैडिकल सहायता के लिए डैसक पर हाजिर थे। ज्ञान सिंह और बठिंडा युनिट के और साथी, राम सवरन लक्खेवाली, सुखविंदर बागपुर, कुलविंदर नगारी और अन्य साथी वालंटियर के तौर पर काम की देख रेख कर रहे थे। केरल, तमिलनाडु और जम्मू के कलाकारों ने तर्कशील विचार को पेश करते हुए गीत गाकर सम्मेलन शुरू होने की प्रतीक्षा कर रहे प्रतिनिधियों का मनोरंजन किया।

इस कांफ्रेंस में तर्कशील सोसायटी पंजाब, नास्तिक समाज आंध्र प्रदेश, एचआरओ उड़ीसा, द्रविड़ कड़गम तमिलनाडु, अंधश्रद्धा निर्मूलन समिती महाराष्ट्र, ए टी कावूर ट्रस्ट केरला, रेशनिलिस्ट फॉर्म तमिलनाडु, मानव विकास वेदिका आंध्र प्रदेश और तेलंगाना , युक्तिवादी संघम केरला, साइंस फार सोसायटी झारखंड, तर्कशील सोसायटी हरियाणा, मानववादी चंडीगढ़ आदि संस्थाओं के लगभग 18 राज्यों के 350 प्रतिनिधि शामिल हुए। लगभग साढ़े दस बजे फीरा अध्यक्ष नरेंद्र नाइक की अध्यक्षता में उद्घाटन सत्र से सम्मेलन की शुरुआत हुई, जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. अरविंद, वाइस चांसलर पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला और गेस्ट ऑफ ऑनर के रूप में नेपाल के ह्यूमनिस्ट इंटरनेशनल के निर्देशक उत्तम निरौला जी शामिल हुए। तर्कशील सोसायटी पंजाब की सदस्य कुलवंत कौर और तार्किक सोच वाले युवाओं उदय सिंह और अमीश बागपुर ने फूलों का गुलदस्ता भेंट कर अतिथियों का स्वागत किया। डॉ. अरविंद ने दीप प्रज्वलित कर सम्मेलन का उद्घाटन किया। त.स.पं के राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय विभाग के सहयोगी सदस्य राम कुमार पटियाला ने इसी शमां को गुलदस्ते में बदल कर मुख्य अतिथि को भेंट किया। तर्कशील सोसायटी पंजाब के संगठनात्मक प्रधान हेमराज स्टेनो ने उपस्थित अतिथियों का स्वागत किया। मंच संचालन करते हुए तर्कशील सोसायटी पंजाब राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय विभाग के अध्यक्ष जसवंत मोहाली ने तर्कशील सोसायटी पंजाब का परिचय दिया। फीरा के राष्ट्रीय सचिव सुदेश घोडेराव ने फीरा सम्मेलन के उद्देश्य की जानकारी दी। ह्यूमनिस्ट इंटरनेशनल के अध्यक्ष एंड्रयू कॉपसन ने इंग्लैंड से फीरा सम्मेलन के लिए संदेश भेजा। वह 2015 से इस अंतरराष्ट्रीय संगठन के अध्यक्ष हैं और उन्होंने धर्मनिरपेक्षता, मानवतावाद जैसे विषयों पर पुस्तकें लिखी हैं। इस अवसर पर भेजे गए वीडियो संदेश में तर्कशीलता पर पहरा देते हुए शहीद हुए साथियों–नरेंद्र दाभोलकर, एम. कलबुर्गी, गोविंद पानसरे और पत्रकार गौरी लंकेश को भी याद किया गया। इस बीच ओडिशा से फीरा नेता धनेश्वर साहू द्वारा लिखी गई किताब,जो केरल से लाल सलाम द्वारा छापी गई है, को जारी किया गया। वहीं बठिंडा से तर्कशील सोसायटी सदस्य केवल कृष्ण द्वारा बनाई हुई ए.टी. कावूर, गौरी लंकेश और नरेंद्र दाभोलकर की पेंटिंग्स का विमोचन भी किया गया। सोसाइटी फॉर ह्यूमिनिज्म नेपाल के प्रमुख, उत्तम निरौला ने कहां के आज भले ही राजनीति में फिरकापरस्त ताकतों का बोलबाला हो लेकिन हमारी मानववादी और तर्कशील सोच की जड़ें भी बहुत मजबूत है। मुख्य अतिथि डॉ. अरविंद इससे पहले नेशनल इंस्टीट्यूट फॉर साइंस, एजुकेशन एंड रिसर्च, मोहाली में फिजिक्स के प्रोफेसर भी थे। उनके शोध का क्षेत्र क्वांटम फिजिक्स है। खास बात यह है कि उनका दृष्टिकोण वैज्ञानिक है और वह आम लोगों को वैज्ञानिक सोच से जोड़ने के लिए लिखते रहते हैं। अपने प्रभावशाली वक्तव्य में उन्होंने कहा कि ठहराव से

बचने के लिए दर्शन का अध्ययन जारी रखना और तर्कशीलता का निरंतर विकास करना महत्वपूर्ण है। उन्होंने दार्शनिक कार्ल पॉपर को उद्धृत किया और कहा कि जब विज्ञान के किसी विषय पर शोधपत्र प्रस्तुत किया जाता है तो उसकी प्रमाणिकता ही काफी नहीं होती, यह बताना भी आवश्यक होता है कि किन परिस्थितियों में यह प्रमाणिक नहीं है। फीरा अध्यक्ष नरेंद्र नाइक ने आने वाली चुनौतियों के समक्ष संगठन को मजबूत बनाने पर जोर दिया। हरचंद भिंडर ने अतिथियों एवं प्रतिनिधियों का आभार व्यक्त किया। साहित्य विभाग के मुखिया राजपाल सिंह ने डा. अरविंद तथा उत्तम निरौला को किताबें भेंट की।

शाम 5 बजे जनप्रतिनिधियों ने बरनाला शहर में रैली के रूप में लगभग डेढ़ किलोमीटर तक वैज्ञानिक जागरूकता मार्च निकाला। इन प्रतिनिधियों ने पंजाब के मालवा क्षेत्र के इस शहर में भारत के विभिन्न राज्यों की भाषाओं में गीत गाते और उनके अपने पहरावे में मार्च करते हुए अलग ही नजारा पेश किया। प्रतिनिधियों के हाथों में भगत सिंह और पेरियार की तस्वीरें थीं। और हवा में नारे गूंज रहे थे-साम्प्रदायिक फासीवादी सरकार-मुर्दाबाद, वैज्ञानिक चेतना-जिंदाबाद, तर्कशील मानवतावादी संगठनों की एकता-जिंदाबाद। नारों का संदेश था कि लोग धार्मिक अनुयायी बनने के बजाय वैज्ञानिक तरीके से जीएं। चौक में तर्कशील सोसायटी पंजाब के वक्ता राजिंदर भदौड़ ने संबोधित किया। उन्होंने केंद्र की वर्तमान सरकार से खतरों के प्रति आगाह करते हुए कहा कि फासीवादी सरकार को वैज्ञानिक सोच और विज्ञान की बातें करना पसंद नहीं है। सभी तर्कशील संगठनों की एकता आवश्यक हो गई है। रैली के अंत में प्रतिनिधि पैदल तर्कशील भवन में लौट आए। शारीरिक रूप से थके होने के बावजूद वे रैली के उत्साह से मानसिक रूप से तरोताजा हो गए थे।

प्रतिनिधियों की थकान दूर करने के लिए तर्कशील हॉल में एक सांस्कृतिक कार्यक्रम उनका इंतजार कर रहा था। इस सत्र का मंच प्रबंधन राजिंदर भदौड़ ने किया। राजकीय कन्या वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय शहना की छात्राओं का लोकनृत्य गिद्धे का प्रदर्शन उल्लेखनीय रहा। राम कुमार व सुखदेव मलूकपुरी ने जादू की प्रस्तुति दी। लोक कला मंच मंडी मुल्लांपुर की टीम ने हरकेश चौधरी की निर्देशानुसार दो कोरियोग्राफी- ''मैं धरती पंजाब की'' और ''भगत सिंह की घोड़ी'' पेश की। दक्षिणी राज्यों के साथी भले ही संवाद की भाषा नहीं समझते थे लेकिन उनकी आंखों की नमी बता रही थी कि वे कला की भाषा समझते हैं। मन में क्रांतिकारी भावनाओं को पैदा करते हुए कार्यक्रम का समापन हुआ। अब सबको भूख लग चुकी थी, रात का खाना शुरू हो चुका था। खाने की व्यवस्था राजेश अकलिया ने बाखूबी की। गुरप्रीत शहना और उनकी टीम बाहर से आए प्रतिनिधियों के ठहरने, स्टेशन से आए मेहमानों के स्वागत और तर्कशील भवन से धर्मशाला के लिए आने जाने की व्यवस्था देख रही थी।

कान्फ्रेंस के दूसरे दिन मानव विकास वेदिका आंध्र प्रदेश की ओर से पंजाब के बुद्धिजीवी दंपति सुरिंदर अजनात और सोमा सबलोक को 51 हजार रुपए की राशि व शाल से सम्मानित किया गया।

केरल के 71 वर्षीय साथी सुनीलम् तर्कशीलता और मानवता का संदेश देने के लिए बरनाला से केरल तक साइकिल चलाने के लिए तैयार थे। हेमराज स्टेनो ने उन्हें हरी झंडी दिखाकर रवाना किया।

मीडिया टीम के साथी राम स्वर्ण लक्खेवाली, अजायब जलालाना, मजीद आजाद और सुरजीत टिब्बा लगातार प्रिंट मीडिया और सोशल मीडिया के लिए सम्मेलन की रिपोर्टिंग की।

तर्कशील सोसायटी पंजाब के नेता हरिंदर लाली की देखरेख में फीरा की अगली कार्यकारिणी अगले दो साल के लिए चुनी गई। नरेंद्र नाइक की अध्यक्षता में, नई कार्यकारिणी ने प्रतिनिधियों को अगले कार्य की योजना बनाने के लिए प्रेरित किया। सुझाव थे कि फीरा की एक पत्रिका, फीरा का पंजीकरण, व्हाट्सएप समूह, समय-समय पर फीरा के कार्यकारी सदस्यों की जूम बैठक, समसामयिक मुद्दों पर दिल्ली में सम्मेलन

किया जाना चाहिए। फीरा के कार्यकारी सदस्य ईटी राव द्वारा धन्यवाद प्रस्ताव के साथ सम्मेलन का समापन हुआ।

इस कांफ्रेंस के दौरान अलग-अलग विषयों पर चार एकेडमिक सेशन भी हुए जिसमें अलग-अलग राज्यों की अलग-अलग संस्थाओं के वक्ताओं ने भाषण दिए।

सैशन 1. औरत और अंधविश्वास

अध्यक्षः एम ए सिकूर (Humanist and Rationalist Organization, Odisha)

चंद्रमा मजूमदार, महाराष्ट्र

ममता नायक, कर्नाटका

मनीष कुमार, उत्तराखंड

डॉ. अरीत, पंजाब, सजीत,सी.केरला

सैशन 2. अंधविश्वास के खिलाफ लड़ने वाले आजादी के परवाने

चेयर पर्सनः ई.टी.राव (Humanist and Rationalist Organization) (HRO), Odisha

रिपोर्टरः एमएन बुद्धा, नास्तिक समाज, आंध्र प्रदेश

डॉक्टर धनेश्वर साहू, एचआरओ, उड़ीसा

हरीश देशमुख, अखिल भारतीय अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति, महाराष्ट्र, बलबीर लौंगोवाल, तर्कशील सोसायटी, पंजाब

सैशन 3. The letter and spirit of article 51A(h)

चेयर पर्सनः सांबासिवा राव, अध्यक्ष, मानव विकास वेदिका, आंध्र प्रदेश

रिपोर्टरः बी सुब्बाराव, कर्नाटका

पैनलिस्टः डॉक्टर दिबय ज्योति, सैकिया, असम

हरेंद्र लाली, तर्कशील सोसायटी, पंजाब

एस एन अंबुमानी, द्रविड़ कड़गम, तमिलनाडु

चेलीमेला राजेश्वर, तेलंगाना

तमिल सेल्वन, रेशनिलिस्ट फॉर्म, तमिलनाडु

सुकुमारन, ए टी कावूर ट्रस्ट, केरला

एनवी सोभैया, आंध्र प्रदेश

लाल सलाम, केरला

सैशन 4. देश विभाजन के दौरान पंजाब के त्रासदिक घाव, चेयर पर्सनः एम एस एन मूर्ति, मानव विकास वेदिका, आंध्र प्रदेश

रिपोर्टर-शुनूगसुंधरा, तमिलनाडु, पैनलिस्टः, भूरा सिंह, तर्कशील सोसायटी, पंजाब

... पृष्ठ 41 का शेष अंगूठी में ही था। असल में उस अंगूठी में नग वाले स्थान पर काफी सारा पारा भरा हुआ था।

दीपक की गरमी के कारण नग में मौजूद पारा उछलता था या हिलता था, जिसे तांत्रिक विभिन्न प्रश्नों के उत्तर 'हां' या 'ना' मे बता कर लोगों को उल्लू बनाता था।

अग्नि स्नान :

आप ने कई बार देखा होगा कि आर्केस्ट्रा आदि कार्यक्रमों में कुछ लोग जलती हुई मशाल तथा पिघलती मोमबत्ती के मोम को अपने नग्न शरीर पर मलते हैं किंतु वे झुलसते नहीं। अंधविश्वासी तथा तांत्रिक लोग तो इसे तंत्रमंत्र का चमत्कार बताते हैं। जबकि थोड़े बहुत पढ़ेलिखे लोग यह समझते हैं कि ऐसा करने वाला अपने शरीर पर कोई लेप या रसायन लगा लेता होगा। वास्तव में ये दोनों ही बातें सही नहीं हैं।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, हमारा शरीर 3 सेकंड तक अग्नि की तपिश को बरदाश्त कर सकता है। जलती मशाल को शरीर के अंगों पर इस प्रकार फेरा जाता है कि मशाल 3 सेकंड से अधिक शरीर के किसी एक ही हिस्से पर न रहे। सब से बड़ी बात यह होती है आग की लौ या लपट हमेशा 'ऊपर' होती है, जबकि मशाल की लपट के निचले हिस्से को ही शरीर पर फेरा जाता है। निचला हिस्सा तो ठंडा सा रहता है, इसलिए झुलसने का कोई प्रश्न ही नहीं।

आप स्वयं इस करतब को बड़ी आसानी से कर सकते हैं लेकिन चूंकि यह खतरनाक है, इसलिए उचित प्रशिक्षक की देखरेख में ही करें।

(स्रोतः पुस्तक 'तंत्र मंत्र यंत्र')

प्रेरणा, सबक और यादें

कृष्ण बरगाड़ी तर्कशील आन्दोलन के दिवंगत नायक हैं, जिनका जीवन और कार्य समाज मे वैज्ञानिक चेतना फैलाने वाले तर्कशील कार्यकर्ताओं के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। जब तक वे आंदोलन का हिस्सा रहे, दृढ़ कदमों से चलते रहे। नए रास्ते खोजते रहे । उन्होंने निज हित को त्याग कर लोक हित को सदा महत्व दिया। वे अंधविश्वास और अज्ञानता के अंधेरे को हराने के लिए एक मशाल की तरह जगमगाते रहे।वैज्ञानिक विचारों को जन-जन तक पहुंचाने के लिए वे तर्कशील कारवां के नेता बने। इस राह में उन्हें बहुत मुश्किलों का सामना भी करना पड़ा,लेकिन वे अपने कार्यों से सदा संगठन हित में ईमानदारी से काम करते रहे उन्होंने समूह के हित को सदा प्राथमिकता दी । कैंसर जैसी बीमारी से हिम्मत से लड़ते हुए उन्होंने संसार से विदा होते वक्त भी लोगों को एक सीख दी थी ।जीवन का सफर रुक जाने के बाद भी वे मानवता के प्रति वफादार रहे।उनकी इच्छानुसार परिवार ने मृतक शरीर चिकित्सा अनुसंधान के लिए मैडीकल कालेज को प्रदान कर दिया। वे उत्तर भारत के स्वयं चिकित्सीय उपयोग हेतु शरीर सौंपने वाले पहले व्यक्ति बने। उनकी याद हमारे दिलों में बसी है जो चलते रहने की ताकत देती है। तर्कशील आंदोलन के कार्यकर्ताओं को प्रोत्साहित करती है।

हम अपने दिवंगत नायक के जीवन को नमन करते हुए 21वीं वर्षगांठ पर उनके बताए रास्ते पर पूरी ईमानदारी से चलने का संकल्प लेते हैं।

12 फरवरी, 2023 को 21वां कृष्ण बरगाडी प्रांतीय समारोह
तर्कशील भवन बरनाला (पंजाब) में आयोजित होगा। कार्यक्रम में भाग लेने के लिए आप सादर आमंत्रित हैं।
प्रेषक: स्टेट कमेटी, रैशनल सोसाइटी पंजाब

हम कब बोलेंगे! 'प्रतिष्ठित रेमन मैग्सेसे' पुरस्कार से सम्मानित पत्रकार रवीश कुमार ने एन डी टी वी का बड़ा हिस्सा बड़े सेठ द्वारा खरीदे जाने से अपना इस्तीफा देकर अपनी बुलंद आवाज उठाई है।

उनके अनुसार क्या आप सब एक ऐसे देश में रहना पसंद करेंगे जहां सरकार सिर्फ उन्हीं की हो जो सरकार के सानिध्य में रह कर जीना कबूल करते हैं, विरोधियों की आवाज को दबाने वाली ताकतों को सरकार लगातार शह देती हो?

धर्म के आधार पर फैली नफरत की हवा भारत के युवाओं को दंगाई बनाएगी या डॉक्टर और इंजीनियर? इस गर्म हवा को शांत करने में आपकी क्या भूमिका है? अब इन सवालों पर बोलने की बारी आपकी है। आज चुप रहोंगे तो कल ये खामोशी बहुत महंगी पड़ेगी। यह देश तभी तक सुरक्षित है जब तक कोई किसी और के लिए बोल रहा है। मानो कोई अपने लिए बोल रहा हो। यदि सत्ता के बल पर सत्ताधारी आप पर एक धर्म का मत थोपने में सफल हो जाते हैं और दूसरे लोग चुप रहते हैं, तो भारत, जो अलग-अलग राज्यों से बोलता था, हालाँकि हम भाषा, धर्म और संस्कृति में भिन्न हैं, फिर भी हम अंदर से एक हैं। तो अब हम सबको बोलना पड़ेगा,तभी देश सुरक्षित रहेगा

- रवीश कुमार

अंतर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव: सचो सच

'कश्मीर फाइल्स' को लेकर इस्राइली फिल्मकार की दो टूक टिप्पणी

गोवा में 53वें भारतीय अंतरराष्ट्रीय फिल्म महोत्सव की ज्यूरी के प्रमुख इस्राइली फिल्म निर्माता नादव लापिड ने हिंदी फिल्म 'द कश्मीर फाइल्स' को 'अपमानजनक प्रचार' और 'भद्दी' करार दिया है। लैपिड ने कहा कि वह 'हैरान और परेशान' थे कि इसे फिल्म समारोह में दिखाया गया था।

इजरायली फिल्म निर्माता अपनी टिप्पणियों पर कायम:

लैपिड ने कहा है कि वह अपनी टिप्पणियों पर कायम है क्योंकि वह फिल्म के रूप में प्रस्तुत प्रचार को पहचानता है। लैपिड ने कहा कि खराब फिल्में बनाना कोई अपराध नहीं है, लेकिन विवेक अग्निहोत्री द्वारा निर्देशित फिल्म 'कच्ची, हिंसक और भटकाने वाली है। एक इज़राइली अखबार के साथ एक साक्षात्कार में, लैपिड ने कहा कि सच बताना अंतरराष्ट्रीय जूरी के प्रमुख के रूप में उनका कर्तव्य था। सच तो यह है कि वे कल्पना कर रहे हैं कि जल्द ही एक दिन इस्राइल में भी ऐसी ही स्थिति उत्पन्न हो सकती है, और मुझे खुशी होगी अगर ऐसे मामले में विदेशी जूरी के प्रमुख जो कुछ भी देखेगा उसके बारे में बोलेगा। एक तरह से मुझे लगता है कि जिस जगह पर मुझे बुलाया गया था, उस जगह के प्रति मेरा कर्तव्य था।

उल्लेखनीय है कि 'द कश्मीर फाइल्स' को 22 नवंबर 2022 को भारत के अंतर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव में प्रदर्शित किया गया था। लैपिड ने दावा किया कि उन्हें भारतीय सिनेमा जगत की हस्तियों से सैकड़ों ईमेल और संदेश मिले हैं जिन्होंने उनके विचारों का समर्थन किया। फिल्म निर्माता ने जोर देकर कहा, ''भारत सरकार उत्साहपूर्वक इस फिल्म का प्रचार कर रही है, इसलिए वे खुश नहीं हैं।''

फिल्म को राजनीतिक दबाव में प्रतिस्पर्धी श्रेणी में रखा गया था:

अपने सत्ता-विरोधी विचारों के लिए जाने जाने वाले नदव लापिड ने आरोप लगाया कि 'द कश्मीर फाइल्स' को 'राजनीतिक दबाव में फिल्म समारोह की आधिकारिक प्रतियोगिता में शामिल किया गया।' मुझे लगता है कि एक विदेशी के रूप में यह सब बातें कहना मेरा कर्तव्य था, जो यहां रहने वाले लोगों को कहने में मुश्किल हो सकती है। हम केवल समुद्र तटों पर खाए जाने वाले व्यंजनों के बारे में ही बात नहीं कर सकते हैं।''

(पंजाबी ट्रिब्यून से धन्यवाद के साथ)

If undelivered please return to :
Tarksheel
Tarksheel Bhawan, Tarksheel Chowk,
Sanghera ByPass, BARNALA-148101
Post Box No. 55
Cell. 98769 53561, 98728 74620
Web : www.tarksheel.org
e-mail : tarkshiloffice@gmail.com

BOOK POST
(Printed Matter)

To ....

....

....